अध्याय 16

भारतीय अर्थव्यवस्था के समक्ष चुनौतियां

भारत आज विश्व की सबसे तेज बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में शामिल है तथा सम्पूर्ण विश्व इसकी बढ़ती आर्थिक शक्ति को स्वीकार कर रहा है। लेकिन इस विकास के साथ–साथ भारतीय अर्थव्यवस्था को अनेक चुनौतियों का सामना भी करना पड़ रहा है। समाचारपत्रों, टी.वी. चैनलों, जन सामान्य की चर्चाओं, इंटरनेट आदि से मिलने वाली विभिन्न सूचनाओं पर हम विचार करें तो पाते हैं कि भारतीय अर्थव्यवस्था के समक्ष उत्पन्न अनेक चुनौतियों में मूल्यवृद्धि, गरीबी तथा बेरोजगारी की समस्याएं सम्भवतः सर्वाधिक गम्भीर हैं। ये समस्याएं कमोबेश एक साथ जुड़ी हुई हैं तथा स्वतंत्रता के बाद से अब तक निरन्तर बनी हुई हैं।

गरीबी तथा बेरोजगारी को भारतीय अर्थव्यवस्था की सबसे प्रमुख सामाजिक आर्थिक समस्या कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इन समस्याओं के कारण न केवल अर्थव्यवस्था को नकारात्मक स्थितियों का सामना करना पड़ता है अपितु समाज को भी अनेक हानियां वहन करनी पड़ती हैं। इनके सम्बन्ध में हमारी सामान्य समझ और ज्ञान को व्यापक बनाने की दृष्टि से हमें इनका अर्थ, स्वरूप, कारण, परिणाम तथा रोकने के उपायों की प्रारम्भिक जानकारी होना आवश्यक है।

16.1 मूल्य वृद्धि या मुद्रास्फीति (Inflation)

हम अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने तथा जीवन को आनन्दमय बनाने के लिए बाजार से अनेक प्रकार की वस्तुओं एवं सेवाओं को क्रय करते हैं। आपने भी निश्चित ही कपड़े, खिलौने, जूते, चप्पल, मिठाइयां, आइसक्रीम आदि खरीदे होंगे या अपने परिजनों को परिवार की आवश्यकता की वस्तुऐं खरीदते देखा होगा। वस्तुओं के क्रय के दौरान सामान्यतया देखने को मिलता है कि अधिकांश वस्तुओं के लिए हमें पिछले वर्षों की तुलना में अधिक कीमत अदा करनी होती है। इस बढ़ती कीमतों के परिदृश्य को मूल्य वृद्धि के रूप में जाना जाता है। आर्थिक शब्दावली में मूल्य वृद्धि के लिए मुद्रास्फीति शब्द का प्रयोग किया जाता है।

कीमत– मौद्रिक अर्थव्यवस्था में किसी वस्तु या सेवा की एक इकाई का मुद्रा की जितनी इकाइयों के साथ विनिमय होता है, वह उस वस्तु अथवा सेवा की कीमत कहलाती है।

पारिभाषिक तौर पर सामान्य कीमत स्तर में सतत् वृद्धि की स्थिति मुद्रास्फीति कहलाती है। यह अनेक वस्तुओं अर्थात् वस्तु समूह के लिए कीमत में औसत वृद्धि को बताती है। यह सम्भव है कि बाजार में आप सब्जियों की कीमतों में वृद्धि अनुभव कर रहे हों तथा समाचार पत्र कम होती मूल्य वृद्धि या मुद्रास्फीति बता रहे हों। इसके विपरीत यह भी सम्भव है कि आप किसी वस्तु या कुछ वस्तुओं की कीमतों में कमी महसूस कर रहे हों लेकिन समाचार पत्र बढ़ती मुद्रास्फीति बता रहे हो। मुद्रास्फीति का सम्बन्ध अर्थव्यवस्था में अनेक वस्तुओं (वस्तु समूह) की कीमतों के औसत स्तर (सामान्य कीमत स्तर) में वृद्धि से है न कि किसी एक वस्तु की कीमत में वृद्धि मात्र से।

सामान्य कीमत स्तर का तात्पर्य अनेक वस्तुओं या एक वस्तु समूह की कीमतों के औसत स्तर से है। अतः सामान्य कीमत स्तर किसी एक वस्तु की कीमत को नहीं बताता अपितु यह तो एक निश्चित वस्तु समूह की औसत कीमत को व्यक्त करता है।

16.1.1 मुद्रास्फीति का माप

मुद्रास्फीति की हानियों से बचने के लिए तथा इसके प्रभावी नियंत्रण हेतु इसे मापा जाना आवश्यक है। अतः सभी अर्थव्यवस्थाएं मुद्रास्फीति की दर के मापन हेतु भिन्न–भिन्न प्रकार के कीमत सूचकांक बनाती है। सामान्य कीमत स्तर में परिवर्तन को मापने के लिए भारत में भी अनेक प्रकार के कीमत सूचकांक तैयार किये जाते हैं। इन सूचकाकों में थोक मूल्य सूचकांक, उपभोक्ता मूल्य सूचकांक तथा राष्ट्रीय आय अवस्फीति कारक प्रमुख हैं। ये सूचकांक एक निश्चित वस्तु समूह की कीमतों में होने वाले औसत परिवर्तन का माप करते हैं। मुद्रास्फीति को किसी निर्धारित कीमत सूचकांक में समय के साथ–साथ होने वाले आनुपातिक परिवर्तन या प्रतिशत परिवर्तन से मापा जाता है।

सूचकांक अलग–अलग पैमाने पर मापनीय इकाइयों का औसत व्यक्त करते हैं। सूचकांक दिये गये आधार के सापेक्ष किसी चर के आकार में परिवर्तन को दर्शाते हैं।

16.1.2 भारत में मुद्रास्फीति

भारत में मुद्रास्फीति की दर को सामान्यतः थोक मूल्य सूचकांक से मापा जाता है। स्वतंत्रता के पश्चात से ही उच्च मुद्रास्फीति की दर भारत में एक गम्भीर समस्या रही है यद्यपि

1950 ई. के दशक में मुद्रास्फीति की औसत दर मात्र 1.7 प्रतिशत थी। लेकिन 1960 के दशक में यह 6.4 प्रतिशत हो गयी। सत्तर के दशक में यह 9 प्रतिशत से ऊपर पहुंच गयी। ऊँची मुद्रास्फीति का यह दौर 1995 ई. तक चलता रहा । इसके पश्चात मुद्रास्फीति में कुछ कमी देखने को मिली। वर्ष 2000–01 से 2011–12 के मध्य यह लगभग 4.7 प्रतिशत बनी रही।

16.1.3 मुद्रास्फीति से हानियाँ

एक सामान्य व्यक्ति यह अनुभव करता है कि मूल्य वृद्धि या मुद्रास्फीति के कारण उसे पहले की तुलना में अधिक कीमत अदा करनी पड़ती है। लेकिन वास्तव में समस्या यहीं पर समाप्त नहीं होती। मूल्यवृद्धि व्यक्ति एवं राष्ट्र दोनों के लिए हानि की एक श्रृंखला का निर्माण करती है। इससे मुद्रा के मूल्य में कमी आती है। मुद्रास्फीति के कारण मुद्रा की एक निश्चित मात्रा से पूर्व के वर्षों की तुलना में कम मात्रा में वस्तुयें और सेवायें खरीदी जा सकती हैं। लगातार बढ़ती मुद्रास्फीति मुद्रा के मूल्य को तेजी से गिराती है।

मुद्रा के मूल्य का तात्पर्य मुद्रा की क्रय शक्ति से है जो कि मुद्रा द्वारा वस्तुओं और सेवाओं को क्रय करने की क्षमता को बताता है।

मुद्रास्फीति के कारण निश्चित वेतन तथा मजदूरी प्राप्त करने वाले वर्ग को भी हानि होती है। इस वर्ग को उनके समान कार्यों एवं सेवाओं के लिए प्राप्त समान राशि की मुद्रा का मूल्य कम हो जाता है। मुद्रास्फीति को अन्यायपूर्ण माना जाता है, क्योंकि इससे बचतकर्ता की बचत का मूल्य गिरता है तथा ऋणी को मुद्रास्फीति से लाभ होता है क्योंकि उसे कम मूल्यवाली मुद्रा वापस चुकानी होती है।

मुद्रास्फीति का प्रभाव आर्थिक विकास की दर, गरीबी, बेरोजगारी, आय एवं धन के वितरण आदि पर भी पड़ता है जिसका अध्ययन आगे की कक्षाओं में किया जायेगा। सार रूप में यह कहा जा सकता है कि मुद्रास्फीति विकास के लाभों को समाप्त कर देती है अतः इसे नियंत्रण में रखे जाने की आवश्यकता होती है।

16.1.4 मुद्रास्फीति का माँग प्रेरित तथा लागत प्रेरित स्वरूप

मुद्रास्फीति को कौन निर्धारित करता है अर्थात मुद्रास्फीति के क्या कारण है। यह कभी कम तो कभी ज्यादा क्यों होती है ?इन सभी प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए समग्र माँग तथा समग्र पूर्ति की अवधारणाओं के द्वारा मूल्य वृद्धि के माँग प्रेरित तथा लागत प्रेरित स्वरूप को समझना आवश्यक है। एक देश में उत्पादित अन्तिम वस्तुओं और सेवाओं पर प्रत्याशित व्यय का योग समग्र माँग कहलाता है। समग्र माँग का स्तर उपभोग हेतु माँग, निवेश हेतु वस्तुओं की माँग, सरकार द्वारा वस्तुओं के क्रय तथा विदेश क्षेत्र को विशुद्ध निर्यात का योग होता है। समग्र पूर्ति का तात्पर्य उत्पादन की उस मात्रा से है जिसे अर्थव्यवस्था दिये गये संसाधनों तथा उपलब्ध तकनीक से उत्पादित कर सकती है।

अर्थव्यवस्था में समग्र माँग तथा समग्र पूर्ति के बीच उत्पन्न होने वाले असंतुलन कीमतों में परिवर्तन उत्पन्न करते हैं। जब समग्र माँग में वृद्धि होती है या समग्र पूर्ति में कमी आती है या दोनों स्थितियाँ एक साथ उत्पन्न हो जाती है तो अर्थव्यवस्था में कीमतों पर ऊपर की ओर दबाव बनता है। समग्र माँग में वृद्धि के कारण जब मुद्रास्फीति बढ़ती है तो इसे माँग प्रेरित मुद्रास्फीति कहते हैं। लागतों में वृद्धि के कारण समग्र पूर्ति में गिरावट से जो मुद्रास्फीति उत्पन्न होती है उसे लागत प्रेरित मुद्रास्फीति कहते हैं।

16.1.5 मुद्रास्फीति के कारण

मुद्रास्फीति का कोई एक सुस्पष्ट तथा निश्चित कारण नहीं है। यह अनेक कारणों का संयुक्त परिणाम होती है। मुद्रास्फीति के लिए उत्तरदायी कुछ प्रमुख कारक अग्रांकित हैं–

(क) मुद्रा की पूर्ति में तेज वृद्धि–

विश्व के अनेक अर्थशास्त्रियों का मत है कि मुद्रास्फीति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण मुद्रा की पूर्ति का आवश्यकता से अधिक होना है। अर्थव्यवस्था में जब वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन की तुलना में मुद्रा की पूर्ति तेजी से बढ़ती है तो अत्यधिक मुद्रा अपेक्षाकृत कम वस्तुओं के पीछे दौड़ती है इससे दिये गये कीमत स्तर पर समग्र माँग का स्तर समग्र पूर्ति से अधिक हो जाता है और कीमतों में वृद्धि की प्रवृति उत्पन्न हो जाती है।

(ख) औद्योगिक तथा कृषिगत उत्पादन में धीमी वृद्धि–

स्वतंत्रता के पश्चात अधिकांश वर्षों में भारत में औद्योगिक विकास की दर अपेक्षित दर से कम रही। 1965 से 1985 के मध्य तो उद्योगों का निष्पादन बहुत निराशाजनक रहा। अनेक कारणों से औद्योगिक उत्पादों की माँग में लगातार वृद्धि होती रही, लेकिन उद्योग इस माँग को संतुष्ट करने में असफल रहे। औद्योगिक क्षेत्र में माँग के आधिक्य ने कीमतों को तेजी से बढ़ाया।

अनेक सुधारों और क्रांतियों के बावजूद भारतीय कृषि की उत्पादकता बहुत नीची है। इसके साथ भारतीय कृषिगत उत्पादन माँग को संतुष्ट करने में असफल रहा। ऐसी स्थिति में कृषि उत्पादों की उच्च माँग इनकी कीमतों को लगातार तेजी से

बढ़ा रही है।

(ग) सार्वजनिक व्यय का उच्च स्तर–

विकास के साथ–साथ बढ़ते दायित्वों के कारण सरकारी व्ययों में लगातार वृद्धि हुई है। सरकारी व्यय की यह वृद्धि समाज के लिए पूर्णतः लाभदायक नहीं है। सरकार द्वारा किया जाने वाला अनुत्पादक व्यय समग्र पूर्ति को नहीं बढ़ाता, लेकिन जनता को क्रय शक्ति प्रदान करके समग्र माँग को बढ़ा देता है। इससे मुद्रास्फीति की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

(घ) अन्य कारण–

बढ़ती जनसंख्या के कारण भारत में वस्तुओं एवं सेवाओं के लिए माँग का स्तर सदैव उच्च बना रहता है, जो कीमतों को तेजी से बढ़ाता है। अनेक वस्तुओं का मूल्य सरकार द्वारा तय किया जाता है। जब सरकार अपने घाटे को कम करने के लिए इन वस्तुओं की कीमतों को बढ़ाती है, तो अर्थव्यवस्था में मूल्यवृद्धि की समस्या देखने को मिलती है। महंगे आयात, कृषिगत उत्पादों की ऊँची न्यूनतम समर्थन कीमत तय करना, आय का बढ़ता स्तर, अप्रत्यक्ष करों का ऊँचा स्तर, मजदूरी दरों में वृद्धि, औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि में बाधायें इत्यादि कारणों से भी मुद्रास्फीति बढ़ती हैं।

16.1.6 मुद्रास्फीति के नियन्त्रण के उपाय

मुद्रास्फीति का कोई एक कारण नहीं है इसलिए इसे नियंत्रित किया जाना भी सरल नहीं है। मुद्रास्फीति देश के सामने अनेक कठिनाइयाँ उत्पन्न करती हैं। अतः इसे रोका जाना आवश्यक होता है। मुद्रास्फीति के नियंत्रण हेतु किए जा सकने वाले उपाय निम्नलिखित हैं –

(क) मौद्रिक उपाय–

मुद्रास्फीति के नियंत्रण हेतु केन्द्रीय बैंक (भारत का केन्द्रीय बैंक भारतीय रिजर्व बैंक है।) द्वारा मौद्रिक उपाय अपनाये जाते हैं। इन उपायों के अन्तर्गत केन्द्रीय बैंक मुद्रा की मात्रा, साख की उपलब्धता तथा ब्याज दरों को प्रभावित करके समग्र माँग को कम करने तथा समग्र पूर्ति को बढ़ाने का प्रयत्न करती है। जब मुद्रा की मात्रा या साख की उपलब्धता में कमी आती है तो समग्र माँग भी कम हो जाती है जिससे मुद्रास्फीति भी कम हो जाती है।

(ख) राजकोषीय उपाय–

सरकार द्वारा राजकोषीय उपाय किए जाते हैं। इन उपायों में सरकार करारोपण, सार्वजनिक व्यय एवं सार्वजनिक ऋणों में परिवर्तन करके समग्र माँग को नियंत्रित करने तथा समग्र पूर्ति को बढ़ाने का प्रयत्न करती है। सरकार प्रत्यक्ष कर बढ़ाकर तथा सार्वजनिक व्यय में कमी करके तथा सार्वजनिक ऋण लेकर समग्र माँग को नियंत्रित करके मुद्रास्फीति को कम कर सकती है। सरकार अप्रत्यक्ष करों को कम करके एवं उत्पादक निवेश बढ़ाकर समग्र पूर्ति में वृद्धि के माध्यम से भी मुद्रास्फीति को नियंत्रित कर सकती है।

(ग) अन्य उपाय–

उपर्युक्त वर्णित उपायों के अतिरिक्त आवश्यक वस्तुओं को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से उचित मूल्य की दूकानों पर उपलब्ध करवा कर, आधिक्य माँग वाली वस्तुओं का आयात करके, प्रशासनिक कीमतों में कमी करके भी मूल्य वृद्धि को रोका जा सकता है। सरकार द्वारा कृषि एवं उद्योगों को दिया जाने वाला निवेश प्रोत्साहन भी समग्र पूर्ति को बढ़ाकर मूल्यवृद्धि पर नियंत्रण में उपयोगी होता है।

16.2 गरीबी

गरीबी वह स्थिति है जिसमें व्यक्ति जीवन–निर्वाह न्यूनतम आवश्यकताओं को पूरा करने में भी असफल हो जाता है। गरीबी एक व्यापक अवधारणा है, जिसके अनेक आयाम हैं लेकिन सामान्य तौर पर गरीबी शब्द का तात्पर्य आर्थिक अपवेचन से लिया जाता है अर्थात् धन तथा सम्पदा के अभाव को गरीबी कहा जाता है।

हम देखते हैं कि एक ओर कुछ लोग ऐसे घरों में रहते हैं जो बहुत बड़े और सुन्दर हैं एवं दूसरी ओर कुछ लोगों के पास घर ही नहीं होते हैं या कच्चे घर होते हैं। आपने अनेक ऐसे बच्चों को देखा होगा जो विद्यालय आने में समर्थ नहीं हैं। उन्हें अपनी तथा परिवार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए काम पर जाना पड़ता है। हम कह सकते हैं कि समाज में कुछ लोग अमीर होते हैं तथा कुछ लोग गरीब होते हैं। गरीबों के पास धन का अभाव होता है तथा वे अपने जीवन के लिए आवश्यक भोजन, कपड़ा, मकान, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि का न्यूनतम स्तर भी प्राप्त नहीं कर पाते हैं।

16.2.1 निरपेक्ष गरीबी तथा सापेक्ष गरीबी

निरपेक्ष गरीबी–

इसमें जीवन निर्वाह हेतु न्यूनतम या मूलभूत आवश्यकताओं का एक मानक स्तर तय कर लिया जाता है। इसके पश्चात् उन लोगों को निरपेक्ष गरीबी की स्थिति में माना जाता है जो न्यूनतम आवश्यकताओं के मानक स्तर को प्राप्त नहीं कर पाये। अतः निरपेक्ष गरीबी वह स्थिति है जिसमें व्यक्ति अपने जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं को भी पूरा नहीं कर पाता। निरपेक्ष गरीबी का विचार अविकसित राष्ट्रों में अधिक उपयोगी है। भारत जैसे राष्ट्रों में जब गरीबी शब्द का उपयोग किया जाता है, तो इसका तात्पर्य निरपेक्ष गरीबी से ही होता है।

न्यूनतम या मूलभूत आवश्यकताओं का मानक स्तर सभी राष्ट्रों में अलग अलग होता है। यह मानक स्तर राष्ट्र के विकास

की स्थिति, लोगों के जीवन स्तर, अर्थव्यवस्था में मुद्रास्फीति की स्थिति आदि पर निर्भर करता है। ये कारक सभी राष्ट्रों में अलग–अलग हैं अतः सभी राष्ट्रों में निरपेक्ष गरीबी के निर्धारण हेतु न्यूनतम आवश्यकताओं का मानक स्तर अर्थात् गरीबी रेखा भी भिन्न–भिन्न होती है।

सापेक्ष गरीबी–

समाज या राष्ट्र के विभिन्न वर्गों के बीच आय या धन या उपभोग व्यय के वितरण में सापेक्षिक असमानताओं का माप, सापेक्षिक गरीबी कहलाती है। यह विचार विकसित राष्ट्रों में अपेक्षाकृत अधिक उपयोगी है।

16.2.2 भारत में गरीबी का माप

भारत में गरीबी के मापन हेतु प्रथम प्रयास दादा भाई नौरोजी ने 1868 ई. में किया था। स्वतंत्रता पूर्व राष्ट्रीय नियोजन समिति द्वारा भी गरीबी के अनुमान प्रस्तुत किये गये थे। स्वतंत्रता के पश्चात गरीबी रेखा के निर्धारण तथा गरीबी को परिभाषित करने हेतु 1962 ई. में योजना आयोग द्वारा एक अध्ययन–दल का गठन किया गया। 1971 में वी0 एम0 दांडेकर तथा नीलकंठ रथ ने गरीबी के लिए एक कसौटी को परिभाषित किया। इस संदर्भ में 1979 का वर्ष महत्त्वपूर्ण है, जब ''प्रभावी उपभोग माँग एवं न्यूनतम आवश्यकता पर कार्यदल'' जिसे वाई0 के0 अलघ कमेटी भी कहते हैं के द्वारा अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी। इस रिपोर्ट के आधार पर सरकार के द्वारा यह तय किया गया कि ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति 2400 कैलोरी प्रतिदिन तथा शहरी क्षेत्रों में प्रतिव्यक्ति 2100 कैलोरी प्रतिदिन अवश्य मिलनी चाहिए। यदि कोई व्यक्ति उपभोग में इससे कम कैलोरी प्राप्त करता, तो उसे गरीब माना जाता था। इसे कैलोरी या उपभोग आधारित गरीबी रेखा कहा गया। इसके पश्चात डी. टी. लकड़ावाला, सुरेश तेंदुलकर तथा सी. रंगराजन की अध्यक्षता में भी योजना आयोग द्वारा गरीबी के अनुमान लगाने हेतु कार्यदलों का गठन किया गया। लकड़ावाला फार्मूले द्वारा 1993–94 तथा 2004–05 के लिए गरीबी के अनुमान लगाये गये थे।

सुरेश तेंदुलकर तथा सी. रंगराजन के द्वारा गरीबी निर्धारण का आधार उपभोग–व्यय माना गया है। इन्होंने गरीबी रेखा के मापन हेतु खाद्यान तथा गैर–खाद्यान वस्तुओं की न्यूनतम मात्राओं का समूह (गरीबी रेखा बास्केट) तैयार किया तथा यह अनुमान लगाया की बाजार कीमतों के आधार पर वस्तुओं की इस न्यूनतम मात्राओं के समूह (गरीबी रेखा बास्केट)को क्रय करने हेतु कितने उपभोग व्यय की आवश्यकता है।

उन्होंने अपने अनुमानों में पाया की वर्ष 2011–12 में शहरी क्षेत्रों में 1000 रु से कम प्रति व्यक्ति मासिक उपभोग व्यय तथा ग्रामीण क्षेत्रों में 816 रु से कम प्रति व्यक्ति मासिक उपभोग व्यय करने वाला व्यक्ति गरीब है। सुरेश तेंदुलकर के अनुमान के आधार पर भारत में 21.92 प्रतिशत लोग गरीब हैं अर्थात् लगभग 27 करोड़ लोग गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन कर रहे हैं।

सी. रंगराजन ने वर्ष 2011–12 के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में 972 रु प्रति व्यक्ति मासिक उपभोग व्यय तथा शहरी क्षेत्रों में 1407 रु प्रति व्यक्ति मासिक उपभोग व्यय को गरीबी रेखा माना है। इस आधार पर वर्ष 2011–12 में भारत में गरीबी 29.5 प्रतिशत है।

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम के लिए ऑक्सफॉर्ड निर्धनता एवं मानव विकास पहल ने बहुआयामी निर्धनता सूचकांक बनाया। जिसे 2010 के मानव विकास प्रतिवेदन में जारी किया गया। इस निर्धनता सूचकांक के आकलन हेतु तीन आयामों तथा दस सूचकों का प्रयोग किया गया।

भारत में विश्वसनीय समंकों के संकलन का कार्य राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन द्वारा किया जाता है। इसके द्वारा चलाये गये विभिन्न दौरों में एकत्रित किये गये उपभोग व्यय सम्बंधी समंकों के आधार पर विभिन्न विशेषज्ञ गरीबी का अनुमान लगाते हैं।

रिकॉल अवधि (Recall Period)

गरीबी आकलन एवं अनुमान हेतु किये जाने वाले समंकों के संकलन में दो प्रकार की रिकॉल अवधि का उपयोग किया जाता है। समान रिकॉल अवधि में (Uniform Recall Period-URP) 30 दिन की अवधि के लिए उपभोग व्यय के समंक एकत्र किये जाते हैं। मिश्रित रिकॉल अवधि (Mixed Recall Period-MRP) में खाद्यान्न तथा गैर–खाद्यान्न वस्तुओं पर उपभोग व्यय के समंक एकत्रित करने के लिए दो अलग–अलग संदर्भ अवधियों (30 दिन तथा 365 दिन) का संयुक्त रूप से प्रयोग किया जाता है।

16.2.3 गरीबी के कारण

भारत में गरीबी के लिए सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक कारण उत्तरदायी है। इन कारणों का विवेचन निम्नवत है–

(क) सामाजिक कारण

भारत में सामाजिक ढाँचा गरीबी को बढ़ाने वाला रहा है। जन्म, विवाह एवं मृत्यु से सम्बंधित अनेक परम्पराएं ऐसी हैं जो व्यक्ति को कर्जदार बना देती हैं। व्यक्ति जीवनपर्यन्त उस कर्ज के बोझ से बाहर नहीं आ पाता है। इसी प्रकार बेटे के जन्म की चाह ने जनसंख्या वृद्धि में योगदान दिया है जो गरीबी का एक बड़ा कारण है। जातियों में विभाजित ग्रामीण हिन्दू समाज ऐसा

था कि जहाँ समाज के एक बड़े पिछड़े हिस्से को लगातार हीन अवस्था में बनाये रखा गया। इस वर्ग को लम्बे समय तक गरीबी से बाहर आने के लिए कोई अवसर नहीं दिया गया।

गरीबी के कारणों की चर्चा में रेग्नार नर्क्से का नाम अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। नर्क्से ने गरीबी के दुष्चक्र की परिकल्पना प्रस्तुत की और बताया कि एक राष्ट्र इसलिए गरीब होते है कि वह पहले से ही गरीब है। गरीबी के दुष्चक्र का निहितार्थ यह है कि गरीबी का कारण भी गरीबी है तथा गरीबी का परिणाम भी गरीबी ही हैं।

(ख) आर्थिक कारण–

भारत की अधिकांश जनसंख्या आर्थिक पिछड़ेपन का शिकार रही है। आर्थिक पिछड़ेपन की स्थिति में लोग शिक्षा तथा स्वास्थ्य मे निवेश नहीं कर पाते हैं जिससे उनकी गुणवत्ता निम्न बनी रहती है। निम्न गुणवत्ता के कारण इन्हें कम आय प्राप्त होती है और ये गरीबी के दुष्चक्र से बाहर नहीं आ पाते हैं। स्वतंत्रता के पहले अधिकांश भारतीय कृषि पर निर्भर करते थे तथा इनका संसाधन आधार बहुत कमजोर था । निवेश की कमी के कारण कृषिगत उत्पादकता निम्न बनी रही है। इन्हीं कारणों से लघु कृषकों तथा कृषि श्रमिकों को प्राप्त होने वाली आय आज भी जीवन–निर्वाह के न्यूनतम स्तर पर बनी हुई हैं। आर्थिक पिछड़ापन व्यक्ति के पास अवसरों की उपलब्धता कम कर देता है। अवसरों के अभाव में व्यक्ति गरीबी के दुष्चक्र से बाहर नहीं आ पाता है।

(ग) राजनैतिक कारण–

राजनैतिक इच्छाशक्ति की कमी भी भारत में भीषण गरीबी के लिए उत्तरदायी है। पांचवी पंचवर्षीय योजना से पूर्व सरकार द्वारा गरीबी निवारण हेतु कोई विशेष प्रयास नहीं किये गये। गरीबी निवारण हेतु विभिन्न सरकारों द्वारा अनेक योजनाएं बनायी गयीं लेकिन प्रबल राजनैतिक इच्छाशक्ति के अभाव के कारण उन योजनाओं के लाभ लक्षित व्यक्तियों तक नहीं पहुँच पाये। हमारे प्रशासनिक तंत्र में भी अनेक रिसाव हैं। वर्तमान सरकार द्वारा अपनायी जा रही प्रत्यक्ष लाभ–हस्तांतरण की नीति के कारण इन रिसावों में भारी कमी आयी है।

(घ) अन्य कारण–

भारत में भयंकर गरीबी के लिए शिक्षा का निम्न स्तर, उद्यमी प्रवृत्तियों का अभाव, रोजगारपरक तथा व्यावसायिक शिक्षा का अभाव, कमजोर आधारभूत संरचना, पूँजी निर्माण का अभाव, स्वास्थ्य सेवाओं की अनुपलब्धता पर उत्तरदायी है। इनसे देश में उत्पादकता तथा आय का स्तर निम्न बना रहता है जो कि गरीबी का बड़ा कारण है। गरीबों में आत्मविश्वास की भी कमी होती है तथा वे आर्थिक जोखिम उठाने की स्थिति में नहीं होते, अतः स्वयं का व्यवसाय स्थापित कर गरीबी के दुष्चक्र से बाहर नहीं आ पाते हैं। मुद्रास्फीति या मूल्य वृद्धि से भी गरीबी बढती है। कीमतों में वृद्धि के कारण अनेक लोग अपने जीवन निर्वाह की मूलभूत आवश्यकताओं से सम्बन्धित वस्तुओं को क्रय नहीं कर पाते तथा गरीबी रेखा के नीचे चले जाते हैं।

पढ़ें:

राजेश अपनी पत्नी, चार बच्चों और वृद्ध माता–पिता के साथ शहर की कच्ची बस्ती में रहता था। अपने परिवार के पालन–पोषण हेतु वह सुबह जल्दी उठकर समाचार–पत्रों का वितरण करता तथा दिन में एक सेठ के कारखाने में काम करता। वह अशिक्षित था, अतः उसे बहुत कम मजदूरी मिलती थी । इस अल्प मजदूरी का बड़ा हिस्सा माता–पिता के स्वास्थ्य की देखभाल पर खर्च हो जाता। सेठ द्वारा नयी मशीनें खरीदे जाने के कारण अब उसे कम लोगों की जरूरत थी। इसी समय अत्यधिक कार्य करने एवं अच्छा भोजन नहीं मिलने के कारण राजेश का स्वास्थ्य भी खराब रहने लगा। सेठ ने उसको नौकरी से निकाल दिया। अशिक्षित होने के कारण उसके पास रोजगार के अन्य अवसरों का अभाव था तथा उसके पास इतनी योग्यता एवं धन भी नहीं था कि वह स्वयं का व्यवसाय कर सके। अब राजेश तथा उसके परिवार के लिए जीवनयापन करना भी दूभर हो गया।

विचार करें

(क) राजेश के परिवार को गरीबी की स्थिति में माना जाये या नहीं।

(ख) क्या बेरोजगारी तथा गरीबी में कोई गहन सम्बंध है ?

(ग) जनसंख्या तथा गरीबी के मध्य क्या सम्बंध है ?

(घ) क्या शिक्षा रोजगार के अवसरों को बढ़ाती है ?

16.2.4 गरीबी निवारण के उपाय

(क) शिक्षा तथा स्वास्थ्य सेवाओं का प्रसार–

समाज में व्याप्त अधिकांश बुराइयों की जड़ अशिक्षा है। शिक्षा के अभाव में व्यक्ति को अपनी सामर्थ्य तथा उपलब्ध अवसरों का लाभ प्राप्त नहीं होता है। गरीबी की समस्या के उन्मूलन हेतु सभी वर्गों में शिक्षा का प्रसार किये जाने की आवश्यकता है। शिक्षा प्राप्ति के फलस्वरूप श्रम की कुशलता तथा उत्पादकता में वृद्धि होती है। स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार द्वारा भी गरीबों की कुशलता एवं योग्यता को बढाकर उत्पादकता को बढाया जा सकता है। शिक्षा तथा स्वास्थ्य सामान्य श्रम को मानव पूँजी में परिवर्तित कर देते हैं। मानव पूँजी के कारण ही जापान तथा अमेरिका आर्थिक शक्ति बन पाये हैं। अतः सरकार को गरीब वर्गों में शिक्षा का प्रसार एवं स्वास्थ्य सेवाओं का तेजी से विस्तार करना चाहिए।

(ख) रोजगार के अवसरों में वृद्धि–

बेरोजगारी तथा गरीबी में गहरा सहसम्बध है। इन दोनों समस्याओं का सहअस्तित्व पाया जाता है अतः रोजगार के अवसरों में वृद्धि करके गरीबी की समस्या को समाप्त या कम किया जा सकता है। समाज के जिन व्यक्तियों के पास कौशल या योग्यता है उन्हें स्वरोजगार हेतु प्रोत्साहित करके तथा संसाधन उपलब्ध करवाकर गरीबी के जाल से बाहर निकाला जा सकता है। ऐसे गरीब जिनमें कौशल का अभाव है उन्हें मजदूरी रोजगार प्रदान करके उनकी क्रय शक्ति में वृद्धि की जा सकती है यद्यपि मजदूरी रोजगार एवं स्वरोजगार के अनेक कार्यक्रम वर्तमान तथा पूर्व सरकारों द्वारा चलाये गये हैं लेकिन यह इतने पर्याप्त नहीं थे कि गरीबी की समस्या का समाधान कर सके। गरीबी निवारण हेतु शिक्षा को अधिक रोजगारपरक बनाकर रोजगार के अवसरों का विस्तार करना आवश्यक है।

(ग) सामाजिक कुप्रथाओं पर नियत्रंण की आवश्यकता–

भारतीय समाज में व्याप्त कुप्रथाओं ने समाज के विभिन्न वर्गों एवं व्यक्तियों के लिए अवसरों को सीमित रखा तथा उन्हें लगातार गरीब बनायें रखा। अनेक सामाजिक प्रथाऐं जैसे शादी या मृत्यु के समय किया जाने वाला भारी व्यय अनुत्पादक व्यय है जिससे गरीब व्यक्ति ऋण जाल में फंस जाता है और वह कभी भी गरीबी के चंगुल से मुक्त नहीं हो पाता । भारतीय व्यक्ति गरीबी को भाग्य की देन मानकर भी प्रयासहीन हो जाता है। समाज तथा संस्कृति में व्याप्त इन कुप्रथाओं को जब तक दूर नहीं किया जाता तब तक गरीबी निवारण सम्भव प्रतीत नहीं होता ।

(घ) जनसंख्या पर नियंत्रण–

भारत विश्व का दूसरा सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश है। स्वतंत्रता के पश्चात् स्वास्थ्य सेवाओं के प्रसार ने मृत्यु दर में तेजी से कमी की लेकिन जन्मदर में अपेक्षित सुधार नहीं हुआ। जन्मदर तथा मृत्युदर के मध्य अन्तर बढ़ने के कारण भारत की जनसंख्या तेजी से बढ़ी है। इस तेज वृद्धि के कारण गरीबों की जो थोड़ी–बहुत सम्पदायें हैं उनका तेजी से विभाजन होता है तथा गरीब व्यक्ति अधिकाधिक गरीब हो जाता है। बच्चों की संख्या अधिक होने के कारण गरीब परिवार उनके लिए शिक्षा तथा स्वास्थ्य में भी निवेश नहीं कर पाता अतः गरीबी निवारण हेतु जनसंख्या वृद्धि दर पर नियंत्रण लगाया जाना आवश्यक है।

(ड) लक्षित व्यक्ति या समूह तक लाभों को पहुँचाना –

गरीबी निवारण हेतु अनेक महत्वाकांक्षी योजनाएं एवं कार्यक्रम चलाये गये लेकिन इन कार्यक्रमों में अनेक रिसाव थे जिससे इनके अपेक्षित परिणाम नहीं मिले। इन रिसावों के कारण गरीबों हेतु आवंटित संसाधनों का एक बडा हिस्सा गैर गरीबों को आवंटित हो जाता है। यदि सरकार गरीबी निवारण हेतु गम्भीर है तो उसे यह सुनिश्चित करना होगा कि योजनाओं का लाभ गरीबों तक पहुँचे।

16.2.5 गरीबी निवारण हेतु अपनाये गये उपाय

1970 के दशक से पहले सरकार द्वारा गरीबी निवारण हेतु सार्थक प्रयास नहीं किये गये। सरकार को यह विश्वास था कि आर्थिक प्रगति के प्रभाव समाज के कमजोर वर्ग तक धीरे–धीरे पहुँच जाएँगे और गरीबी की समस्या का समाधान आर्थिक विकास के साथ स्वतः ही हो जायेगा। बाद में यह स्वीकार किया गया कि भारत की विकास दर बहुत धीमी है तथा इसके लाभ भी अपेक्षित मात्रा में गरीबों तक नहीं पहुँच पाये हैं। 1970 के पश्चात् गरीबी निवारण हेतु भारत में नयी बहुआयामी नीति अपनायी गई। मजदूरी रोजगार एवं स्वरोजगार के अनेक कार्यक्रम चलाए गये तथा रोजगार प्रदान करके गरीबी की समस्या को समाप्त करने का प्रयत्न किया गया। गरीबी उन्मूलन के लिए सरकार ने गरीबी की रेखा से नीचे (BPL) जीवन यापन करने वाले परिवारों की पहचान करके उन्हें जीवन निर्वाह हेतु आवश्यक वस्तुयें एवं सेवाएं कम कीमत पर या मुफ्त में उपलब्ध करवाने की नीति भी अपनायी। सरकार द्वारा किये गये इन अनेक नीतिगत उपायों से गरीबी में कमी तो आयी लेकिन गरीबी में यह कमी संतोषजनक नहीं है।

16.3 बेरोजगारी

कोई व्यक्ति कार्य के योग्य एवं इच्छुक हो, लेकिन रोजगार प्राप्त करने में असफल हो तो इस स्थिति को बेरोजगारी कहा जाता है। अन्य शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि एक व्यक्ति जो किसी उत्पादकीय क्रिया में लाभकारी तौर पर कार्यरत नहीं है वह बेरोजगार है। भारत युवाओं का देश है लेकिन यह युवा शक्ति तभी लाभदायक होगी जब इसे उचित रोजगार में नियोजित किया जा सके। अपने गाँव या शहर में बहुत से लोग कृषि कार्य में लगे हैं तो अनेक लोग व्यवसाय में कार्यरत हैं। साथ ही कुछ लोग शिक्षा, स्वास्थ्य, बैंकिंग, बीमा आदि सेवाओं में कार्यरत हैं। प्रत्येक रोजगार प्राप्त व्यक्ति काम से स्वयं धन प्राप्त करता है तथा वह अपने राष्ट्र के लिए भी उत्पादन में योगदान करता है। रोजगार से व्यक्ति को धन की प्राप्ति के साथ अनुभव भी प्राप्त होता है जिससे उसकी कार्य कुशलता में वृद्धि होती है। यदि व्यक्ति बेरोजगार रहता है तो उसे धन तथा कुशलता की हानि होती है और वह मानसिक अवसाद का सामना भी करता है। बेरोजगारी एक व्यक्ति को अकुशल तथा असामाजिक बना देती है। बेरोजगारी की स्थिति व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र के लिए अनेक हानियों का निर्माण करती है।

बेरोजगारी को समझने के लिए आवश्यक है कि सर्वप्रथम श्रमशक्ति, कार्यशक्ति तथा बेरोजगारी की दर को समझा जाये।

श्रमशक्ति का तात्पर्य उस जनसंख्या से है जो वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन हेतु चालू आर्थिक क्रियाओं के लिए श्रम की आपूर्ति करती है। इसमें रोजगारशुदा तथा बेरोजगार दोनों शामिल होते हैं। कार्य शक्ति, श्रम शक्ति का वह भाग है जो रोजगार में है। प्रचलित मजदूरी की दरों पर कार्य करने के इच्छुक व्यक्ति को उसकी योग्यता के अनुसार कार्य नहीं मिलने पर वह बेरोजगार कहलाता है। बेरोजगारी दर, बेरोजगार व्यक्तियों की संख्या का श्रम शक्ति में शामिल लोगों की संख्या से अनुपात है।

बेरोजगारी दर के अनुमान तीन अलग–अलग दृष्टिकोण क्रमशः सामान्य स्थिति, साप्ताहिक चालू स्थिति तथा चालू दैनिक स्थिति पर लगाये जाते हैं जिनका अध्ययन हम उच्चतर कक्षाओं में करेंगे।

भारत में बेरोजगारी का अनुमान लगाने हेतु भारतीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन **(NSSO)** द्वारा अलग–अलग दौरों का आयोजन करके आँकड़े जुटाये जाते हैं। बेरोजगारी सम्बंधी आंकड़े जुटाने के लिए इस संगठन ने 2011–12 में 68 वाँ दौर चलाया था। इस दौर में पाया गया कि सामान्य स्थिति के आधार पर प्रति हजार जनसंख्या पर श्रम शक्ति 395 तथा कार्यशक्ति 386 रही व 2011–12 के 68वें दौर में सामान्य स्थिति पर बेरोजगारी दर 2.3 प्रतिशत है।

16.3.1 बेरोजगारी के प्रकार

(क) मौसमी बेरोजगारी –

बहुत से व्यवसाय ऐसे होते हैं जो मौसम बदलने के साथ समाप्त हो जाते हैं। ऐसे व्यवसाय वर्ष की एक निश्चित अवधि या मौसम में ही रोजगार देते हैं। कृषि तथा कृषि आधारित उद्योग इसका श्रेष्ठ उदाहरण हैं। जब मौसम प्रतिकूल होता है तो इन मौसमी व्यवसायों में लगे लोगों को बेरोजगारी का सामना करना पड़ता है। इसे मौसमी बेरोजगारी कहा जाता है।

(ख) संरचनात्मक बेरोजगारी–

विकास के साथ– साथ अर्थव्यवस्था की संरचना बदलती रहती है। किसी एक क्षेत्र में माँग कम होती है तो किसी दूसरे क्षेत्र में माँग बढ़ जाती है। अर्थव्यवस्था की संरचना में परिवर्तन के साथ–साथ माँग का स्वरूप भी बदलता रहता है। इस प्रकार संरचनात्मक परिवर्तनों के कारण जो बेरोजगारी उत्पन्न होती है वह संरचनात्मक बेरोजगारी कहलाती है।

(ग) तकनीकी बेरोजगारी–

उत्पादन की तकनीक में सुधार तथा नवीन मशीनों के उपयोग के कारण जो बेरोजगारी होती है वह तकनीकी बेरोजगारी कहलाती है।

(घ) घर्षणात्मक बेरोजगारी–

इसे भिन्नात्मक बेरोजगारी भी कहा जाता है। दो रोजगार अवधियों के मध्य उत्पन्न बेरोजगारी को घर्षणात्मक बेरोजगारी कहते हैं। यह कार्य बदलने, हड़ताल, तालाबन्दी आदि के कारण उत्पन्न होती है। यह बेरोजगारी अस्थायी प्रकृति की होती है।

(ङ) चक्रीय बेरोजगारी–

अर्थव्यवस्था में होने वाले नियमित प्रकृति के उतार चढ़ावों (तेजी–मंदी की स्थिति) को व्यापार चक्र कहा जाता है। व्यापार चक्रों मे जब मंदी की स्थिति होती है तो समग्र माँग का स्तर बहुत कम हो जाता है। इससे उत्पादन एवं रोजगार में भी गिरावट हो जाती है। समग्र माँग में कमी या व्यापार चक्रों के कारण चक्रीय बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न हो जाती है।

(च) छिपी हुई या प्रच्छन्न बेरोजगारी–

कई बार ऐसा भी होता है कि व्यक्ति रोजगार में संलग्न तो दिखाई देता है लेकिन कुल उत्पादन में उसका योगदान शून्य या नगण्य होता है। यदि आधिक्य या अतिरिक्त श्रम को उस कार्य से हटा भी लिया जाये तो कुल उत्पादन की मात्रा में कमी नहीं होती है। इसे छिपी हुई बेरोजगारी कहा जाता है। यह बेरोजगारी अविकसित देशों के ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि क्रियाओं में अधिक पायी जाती है।

कृषि प्रधान विकासशील अर्थव्यवस्था होने के कारण यहां संरचनात्मक तथा छिपी हुई बेरोजगारी सर्वाधिक पायी जाती है। विकसित देशों में सामान्यतया चक्रीय तथा घर्षणात्मक बेरोजगारी अधिक देखने को मिलती है।

16.3.2 बेरोजगारी के कारण

बेरोजगारी की समस्या अनेक कारणों का संयुक्त परिणाम है। इसके प्रमुख कारण निम्नांकित हैं–

(क) रोजगारपरक शिक्षा एवं प्रशिक्षण का अभाव–

भारत में साक्षरता एवं शिक्षा का स्तर लगातार बढ़ रहा है और इसके साथ ही शिक्षित बेरोजगारी की नयी समस्या भी दृष्टिगोचर हुई है। भारतीय शिक्षा में रोजगारपरकता का अभाव है। यहां शिक्षा की व्यवहारिक उपादेयता बहुत कम है। यहां शिक्षा प्राप्त करने के बावजूद छात्र रोजगार प्राप्त करने में असफल हो जाते हैं। इसी प्रकार भारत में कौशल प्रदान करने वाले प्रशिक्षण केन्द्रों का अभाव भी है। प्रशिक्षण व्यक्ति को मानवीय पूंजी बनाता हैं जिससे उसके लिए रोजगार के अवसरों में वृद्धि होती है।

(ख) बढ़ती जनसंख्या तथा श्रम शक्ति–

सरकार द्वारा रोजगार प्रदान करने हेतु अनेक योजनाऐं चलायी जा रहीं हैं लेकिन ये जनसंख्या वृद्धि के साथ बढ़ती श्रम शक्ति को पूरी तरह खपाने में असफल रही है। भारत में श्रम शक्ति लगातार तेजी से बढ़ रही है। इसके लिए रोजगार के अवसरों के

तेजी से सृजन की आवश्यकता है।

(ग) अनुपयुक्त तकनीक–

भारतीय कृषि तथा उद्योगों में आधुनिक तकनीक को तेजी से अपनाया जा रहा है। यह तकनीक पूँजी गहन तथा श्रम बचतकारी है। भारत जैसे देशों के लिए यह तकनीक उपयोगी नहीं है। भारत में ऐसी तकनीक अपनाये जाने की आवश्यकता है जो यहाँ की विशाल श्रम शक्ति को भी उपयोग में ले सके। अत्याधुनिक तकनीक भी भारत में बेरोजगारी के लिए उत्तरदायी है।

(घ) कृषि का पिछड़ापन–

कृषि का पिछड़ापन तथा धीमा विकास भी भारत में बेरोजगारी का बड़ा कारण है। आज भी लगभग 50 प्रतिशत श्रम शक्ति कृषि तथा सम्बद्व क्षेत्रों मे रोजगार प्राप्त करती है। कृषि क्षेत्र का धीमा विकास इस विशाल जनसंख्या के लिए रोजगार के पर्याप्त अवसर पैदा करने में असफल रहा।

(ड) रोजगार विहीन आर्थिक विकास–

सामान्यतः विकास के साथ रोजगार में भी वृद्धि होती है। भारत ने पिछले 35 वर्षों में तेज गति से विकास किया है, लेकिन इस विकास में सेवा क्षेत्र का योगदान अपेक्षाकृत अधिक रहा। सेवा क्षेत्र की रोजगार गहनता कृषि एवं उद्योगों की तुलना में कम होती है अतः तेज आर्थिक विकास के बावजूद रोजगार के अवसरों मे पर्याप्त वृद्धि नहीं हुई है।

(च) राजनैतिक इच्छाशक्ति एव व्यवस्थित नियोजन का अभाव–

भारत में विकास के साथ–साथ संरचनात्मक परिवर्तनों के फलस्वरूप आधिक्य श्रम को व्यवस्थित नियोजन के द्वारा अन्य क्षेत्रों में खपाये जाने की आवश्यकता थी। यद्यपि बेरोजगारी निवारण हेतु सरकार द्वारा अनेक कार्यक्रम चलाये गये लेकिन इनमें सामंजस्य का अभाव था। इन कार्यक्रमों में रिसाव बहुत ज्यादा थे अतः इनके समस्त लाभ लक्षित व्यक्तियों तक नहीं पहुँच पाये।

16.3.3 बेरोजगारी निवारण के उपाय

बेरोजगारी एवं गरीबी की समस्यायें इतनी गहनता से जुड़ी हैं कि इनके निवारण हेतु अपनाये जाने वाले उपाय पृथक नहीं हैं। सरकार द्वारा पिछले 40 वर्षों से अनेक मजदूरी रोजगार एवं स्वरोजगार कार्यक्रम चलाकर इनके सहअस्तितव को समाप्त करने का प्रयत्न किया गया। मनरेगा जैसी योजनाओं के माध्यम से रोजगार प्रदान करके ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी एवं बेरोजगारी में पर्याप्त कमी लायी गयी है। समानान्तर चल रहे अनेक स्वरोजगार कार्यक्रमों ने शिक्षित एवं कुशल लोगों की बेरोजगारी को कम किया है। अर्थशास्त्रियों का मत है कि बेरोजगारी की दर को शून्य किया जाना सम्भव नहीं है। अर्थव्यवस्था में अल्पमात्रा में संरचनात्मक तथा घर्षणात्मक बेरोजगारी का अस्तित्व अवश्य ही बना रहता है। बेरोजगारी के कारण एक राष्ट्र अपने अधिकतम सम्भव उत्पादन के स्तर को प्राप्त नहीं कर पाता तथा उत्पादन का एक हिस्सा वो हमेशा के लिए खो देता है जिसे वह सभी को रोजगार प्रदान करके उत्पादित कर सकता था। सरकार द्वारा निम्न उपाय अपनाकर बेरोजगारी में पर्याप्त कमी की जा सकती है।

(क) सरकार द्वारा चलाये जा रहे मजदूरी एवं स्वरोजगार कार्यक्रमों में उचित समन्वय हो एवं इनमें न्यूनतम रिसाव हो।

(ख) शिक्षा को रोजगारपरक बनाया जाये तथा युवाओं को प्रशिक्षण एवं कौशल विकास के माध्यम से स्वरोजगार हेतु प्रोत्साहित किया जाये।

(ग) विकास के साथ–साथ कृषि से मुक्त होने वाले आधिक्य श्रम को खपाने के लिए उद्योगों की वृद्धि दर को तेज किया जाये।

सम्भवतः सरकार द्वारा अपनाया गया महत्वाकांक्षी कार्यक्रम ''मेक इन इण्डिया'' तथा निवेश प्रोत्साहन उपाय उद्योगों की वृद्धि दर को तेज गति प्रदान करेंगे। तीव्र औद्योगिक विकास के द्वारा बेरोजगारी में भारी कमी की जा सकती है।

(घ) कुशल नियोजन की आवश्यकता–

भारत में प्रतिवर्ष लाखों नये युवा श्रम शक्ति में सम्मिलित होते हैं। यह भारत के लिए एक अवसर भी है और चुनौती भी। उचित नीति बनाकर इन युवाओं के लिए रोजगार सृजन की आवश्यकता है। रोजगार सम्बन्धी नीति इस प्रकार बनायी जानी चाहिए कि इसमें वर्तमान बेरोजगारों के साथ साथ श्रम शक्ति में नव प्रवेश करने वालों को भी ध्यान में रखा जाये।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. मुद्रास्फीति का तात्पर्य सामान्य कीमत स्तर में सतत वृद्धि से है।
2. मुद्रास्फीति की दर को ज्ञात करने हेतु भारत में थोक मूल्य सूचकांक एवं अनेक प्रकार के उपभोक्ता मूल्य सूचकांक बनाये जाते हैं।
3. कीमत तथा मुद्रा के मूल्य में विपरीत सम्बन्ध पाया जाता है।
4. मुद्रास्फीति के नियंत्रण हेतु मौद्रिक तथा राजकोषीय उपाय अपनाये जा सकते हैं।
5. भारत में गरीबी के अनुमान सर्वप्रथम दादा भाई नौरोजी द्वारा 1868 में लगाये गये।
6. सुरेश तेंदुलकर के अनुसार वर्ष 2011–12 में भारत में 21.92 प्रतिशत लोग गरीब थे।
7. निरपेक्ष गरीबी वह स्थिति है जिसमें व्यक्ति अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को भी पूरा नहीं कर पाता है।

8. बेरोजगारी वह स्थिति है जिसमें कार्यकारी आयु वर्ग में शामिल कार्य के योग्य एवं इच्छुक व्यक्ति प्रचलित मजदूरी की दरों पर रोजगार प्राप्त करने में असफल हो जाता है।

9. भारत में छिपी हुई बेरोजगारी तथा संरचनात्मक बेरोजगारी अधिक पायी जाती है।

10. गरीबी तथा बेरोजगारी के अनुमान लगाने हेतु समंक संकलन का कार्य राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (NSSO) द्वारा किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. भारतीय अर्थव्यवस्था के समक्ष उत्पन्न चुनौतियाँ कौनसी हैं ?
2. मुद्रास्फीति की गणना हेतु कौनसे सूचकांक उपयोग में लाये जाते हैं ?
3. मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने के लिए मौद्रिक उपाय किसके द्वारा लागू किये जाते हैं ?
4. भारत में गरीबी के सबसे नये अनुमान किसके द्वारा प्रस्तुत किये गये हैं ?
5. निरपेक्ष गरीबी की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
6. स्वतंत्रता के पश्चात् गरीबी का अध्ययन करने वाले विद्वानों का नाम लिखिए।
7. भारत में गरीबी को मापने का प्रथम प्रयास किसने तथा कब किया ?
8. श्रम शक्ति को परिभाषित कीजिए।
9. छिपी हुई बेरोजगारी किसे कहा जाता है ?
10. कृषि क्षेत्र में कौनसी बेरोजगारी अधिक पायी जाती है ?
11. विकसित अर्थव्यवस्थाओं में किस प्रकार की बेरोजगारी अधिक पायी जाती है ?
12. भारत में विश्वसनीय समंकों का संकलन करने वाली संस्था कौनसी है ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. मुद्रास्फीति किसे कहते हैं?
2. स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में मुद्रास्फीति की प्रवृत्तियों को समझाइये।
3. मुद्रास्फीति नियंत्रण के राजकोषीय उपायों को समझाइये।
4. मुद्रास्फीति नियंत्रण के मौद्रिक उपाय क्या होते हैं? स्पष्ट कीजिए।
5. निरपेक्ष तथा सापेक्ष गरीबी के मध्य अन्तर बताइये।
6. विभिन्न राष्ट्रों में गरीबी रेखायें अलग–अलग क्यों होती है?
7. भारत में गरीबी के आर्थिक कारणों की विवेचना कीजिए।
8. सुरेश तेंदुलकर द्वारा प्रस्तुत गरीबी के अनुमानों की विवेचना कीजिए।
9. वर्ष 2011–12 के लिए श्रम शक्ति, कार्य शक्ति तथा बेरोजगारी दर के अनुमान क्या हैं?
10. बेरोजगारी से एक व्यक्ति को क्या–क्या हानियाँ होती हैं ?
11. घर्षणात्मक बेरोजगारी से आप क्या समझते हैं ?

निबन्धात्मक प्रश्न–

1. भारत में मुद्रास्फीति के कारणों की विस्तृत विवेचना कीजिए।
2. मुद्रास्फीति से उत्पन्न होने वाली हानियों पर विस्तृत लेख लिखिए।
3. विभिन्न अर्थशास्त्रियों द्वारा गरीबी के अनुमान लगाने हेतु किये गये प्रयासों की व्याख्या कीजिए।
4. गरीबी निवारण हेतु अपनाये जा सकने वाले उपायों की व्याख्या कीजिए।
5. बेरोजगारी कम करने हेतु क्या उपाय अपनाये गये हैं तथा अन्य कौनसे उपाय अपनाये जा सकते हैं?

अध्याय 17

मुद्रा और वित्तीय संस्थाएं

मुद्रा को मनुष्य जाति द्वारा किए गए महान् आविष्कारों में से एक माना जाता है। आग तथा पहिए के आविष्कार की भांति मुद्रा के आविष्कार ने भी मनुष्य जाति के विकास में विस्मयकारी योगदान दिया है। आम तौर पर, वस्तुओं और सेवाओं के लिए हम जो कुछ भी भुगतान करते हैं, उसे 'मुद्रा' कहा जा सकता है। मुद्रा सामान्य रूप से उपयोग लिया जाने वाला विनिमय का साधन है। भुगतान के साधन या विनिमय के माध्यम के रूप में सामान्य स्वीकृति मुद्रा का एक विशिष्ट गुण है। प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किया जाने वाला यह विश्वास कि इसे अर्थव्यवस्था में अन्य सभी के द्वारा स्वीकार कर लिया जायेगा, मुद्रा को मुद्रा बनाता है। अतः मुद्रा वह कोई भी वस्तु है, जिसे वस्तुओं और सेवाओं के भुगतान के लिए सामान्य स्वीकृति प्राप्त है।

विनिमय– वस्तु या सेवा का मुद्रा या अन्य किसी वस्तु अथवा सेवा के बदले आदान–प्रदान, विनिमय कहलाता है।

हम सभी बाजार से अनेक प्रकार की वस्तुएं क्रय करते हैं। आपने भी बाजार से वस्तुएं क्रय की होंगी। 10 रु. का पैन या बिस्किट क्रय किया तो, दुकानदार ने बिना किसी विरोध के 10 रु. स्वीकार कर लिए। इसी प्रकार हम या हमारे परिवारजन जब भी बाजार से सामान क्रय करते हैं, तो उस सामान का जो भी मूल्य होता है, उसके उतने रुपये चुका देते हैं और दुकानदार उन्हें सहर्ष स्वीकार कर लेता है। इस आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत में भारतीय रुपया ही मुद्रा है।

विचार करें :

क्या अमेरिका तथा इंग्लैण्ड में वस्तुओं के क्रय के बदले भारतीय रुपये में भुगतान किया जा सकता है ?

वहां बाजार में भुगतान किस माध्यम से होते हैं अर्थात् अमेरिका तथा इंग्लैण्ड की मुद्रा क्या है ?

मुद्रा के अनेक रूप हैं, जो भुगतान के साधन के रूप में प्रयुक्त होते हैं लेकिन आम आदमी के लिए मुद्रा का सामान्य अर्थ केवल करेंसी (बैंक नोट) और सिक्कों से है। इसका यह कारण है कि भारत में भुगतान प्रणाली मुख्यतः करेंसी तथा सिक्कों के इर्द–गिर्द ही घूमती है। भारतीय मुद्रा को ''भारतीय राष्ट्रीय रुपया'' (Indian National Rupee) कहा जाता है। एक रुपया 100 पैसे के तुल्य होता है। भारतीय रुपये का प्रतीक ₹ है। यह डिज़ाइन देवनागरी अक्षर र और लेटिन के बड़े अक्षर **R** के जैसा है, जिसमें ऊपर दोहरी आड़ी रेखाएं हैं। यह प्रतीक डी0 उदय कुमार द्वारा तैयार किया गया। इसी प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका की मुद्रा यू0स0 डॉलर का प्रतीक **$** है। ब्रिटेन की मुद्रा पाउण्ड स्टर्लिंग का प्रतीक **£** है। यूरोपीय समूह की मुद्रा यूरों का प्रतीक **€** है तथा जापान की मुद्रा जापानी येन का प्रतीक **¥** है।

17.1 मुद्रा की उत्पत्ति तथा विकास

17.1.1 मुद्रा की उत्पत्ति

अंग्रेजी भाषा में मुद्रा को मनी (Money) कहा जाता है। अंग्रेजी भाषा के शब्द मनी की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द मोनेटा (Moneta) से हुई। रोम में पहली टकसाल देवी मोनेटा के मन्दिर में स्थापित की गयी थी। इस टकसाल से उत्पादित सिक्कों का नाम देवी मोनेटा के नाम पर मनी पड़ गया था और धीरे–धीरे मुद्रा के लिए सामान्य रूप से मनी शब्द का उपयोग किया जाने लगा।

ऐसा माना जाता है कि चीन के साथ–साथ भारत भी विश्व के प्रथम सिक्के जारी करने वाले देशों में से एक है। भारतीय सिक्कों का इतिहास ईसा पूर्व से प्रारम्भ हो जाता है। उत्खनन में मिले मौर्यकाल के चांदी के सिक्के इस बात को सत्य सिद्ध करते हैं कि भारत में ईसा से पूर्व ही सिक्कों का प्रयोग आरम्भ हो गया था। भारत में पहला 'रुपया' शेरशाह सूरी द्वारा (1540–45 ई.) जारी किया गया था।

वर्तमान में भारत में 50 पैसे, 1 रुपया, 2 रुपये, 5 रुपये और 10 रुपये के मूल्यवर्गों के सिक्के जारी किये जा रहे हैं। साथ ही भारत के केन्द्रीय बैंक भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा 10रु, 20रु, 50रु, 100रु, 500रु तथा 2000रु मूल्यवर्ग के बैंक नोट जारी किये जा रहे हैं। ₹ 1, ₹ 2 तथा ₹ 5 के बैंक नोटों का उत्पादन वर्तमान में बन्द कर दिया गया है, लेकिन यह चलन में बने हुये हैं। 8 नवम्बर 2016 को प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी ने प्रचलित 500रु तथा 1000रु के नोटों के विमुद्रीकरण की घोषणा कर दी है।

प्रचलित मुद्रा की कानूनी वैधता समाप्त करके उसे प्रचलन से हटाना ही विमुद्रीकरण कहलाता है।

वित्तीय शिक्षा प्रदान करने हेतु भारतीय रिजर्व बैंक ने 'प्रोजेक्ट वित्तीय साक्षरता' प्रारम्भ किया है। इसका उद्देश्य विभिन्न लक्षित वर्गों को केन्द्रीय बैंक तथा सामान्य बैंकिग अवधारणाओं के सम्बंध में सूचनाएँ प्रदान करना है। यदि हम वित्तीय तंत्र के सम्बन्ध में व्यापक ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं तो हम इंटरनेट पर *https://rbi.org.in/financialeducation/home.aspx* वेबसाइट देख सकते हैं। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा वित्तीय साक्षरता प्रदान करने हेतु यह बहुत प्रभावी एवं आकर्षक कदम है। भारतीय वित्तीय तंत्र से सम्बंधित अनेक रुचिकर फिल्में, खेल तथा कॉमिक्स इस वेबसाइट पर उपलब्ध हैं। यहां उपलब्ध होने वाली सूचनाओं तथा ज्ञान की विश्वसनीयता भी अद्वितीय है।

17.1.2 मुद्रा का विकास

मुद्रा के जन्म एवं विकास के सम्बंध में कुछ अध्येता यह मानते हैं कि किसी व्यक्ति ने मुद्रा का आविष्कार नहीं किया है। मुद्रा का आविष्कार एक संयोग मात्र है। पहले वस्तु विनिमय पद्धति प्रारम्भ हुई और फिर मुद्रा का विकास हुआ। दूसरी तरफ अनेक विद्वान यह भी मानते हैं कि वस्तु–विनिमय की कठिनाईयों के कारण मनुष्य जाति ने विनिमय को सुगम बनाने हेतु मुद्रा का विकास किया। मुद्रा का जन्म कैसे भी हुआ हो, सभी विद्वान इस बात पर सहमत हैं कि मुद्रा के वर्तमान स्वरूप तक पहुँचने का प्रथम चरण निश्चित ही वस्तु–विनिमय पद्धति थी।

(क) वस्तु–विनिमय प्रणाली–

इस प्रणाली में वस्तुओं और सेवाओं का विनिमय प्रत्यक्ष रूप से वस्तुओं और सेवाओं के बदले में किया जाता है। विनियम के माध्यम के रूप में वस्तु–विनिमय प्रणाली अब लगभग इतिहास हो चुकी है। वस्तु–विनिमय में आवश्यकता के दोहरे संयोग की कठिनाइयाँ पायी जाती थीं। आवश्यकताओं के दोहरे संयोग से अभिप्राय यह है कि एक व्यक्ति जिस वस्तु को बेचना चाहता है उसकी आवश्यकता दूसरे व्यक्ति को हो तथा दूसरे व्यक्ति के पास विक्रय करने के लिए वह वस्तु हो, जिसकी आवश्यकता पहले व्यक्ति को है। वस्तु–विनिमय प्रणाली में विनिमय हेतु आवश्यकताओं के दोहरे संयोगों की इस दुर्लभ स्थिति की अनिवार्यता थी।

वस्तु–विनिमय प्रणाली में मूल्य के एक मानक मापक का भी अभाव था। इस प्रणाली में धन या मूल्य के संचय तथा मूल्य के हस्तांतरण में भी भारी असुविधा का सामना करना होता। वस्तुओं के रूप में धन या मूल्य का हस्तांतरण बहुत जोखिम भरा होता था। वस्तु विनिमय में एक महत्त्वपूर्ण समस्या अविभाज्य वस्तुओं के सम्बंध में उत्पन्न होती थी। यदि किसी व्यक्ति के पास घोड़ा होता तथा उसे एक भेड़ खरीदनी होती तो वह ना तो सम्पूर्ण घोड़ा दे सकता और ना ही उस घोड़े को विभाजित कर उसका भेड़ के साथ विनियम कर पाता। इन वस्तुओं का विभाजन करने पर इनका सम्पूर्ण महत्त्व ही समाप्त हो जाता। वस्तु विनियम प्रणाली की इन सीमाओं के कारण इसे त्याग दिया गया तथा मौद्रिक विनिमय प्रणाली को अपना लिया गया ।

(ख) धातु–मुद्रा–

वस्तु मुद्रा का स्थान धातु मुद्रा ने ले लिया। प्रारम्भ में धातु से बनी वस्तुओं तथा धातुओं के टुकड़ों ने मुद्रा का कार्य किया। इसके पश्चात् इन पर मोहर लगायी जाने लगी तथा मूल्य लिखा जाने लगा। यह माना जाता है कि धातु के सिक्कों का उपयोग चीन, भारत तथा मिस्र में प्रारम्भ हुआ था । धातु मुद्रा का हस्तांतरण सुविधाजनक नहीं था। इनके उत्पादन में अधिक खर्चा आता था और मुद्रा की बढ़ती आवश्यकता को धातु मुद्रा से पूरा किया जाना सम्भव नहीं था ।

(ग) पत्र–मुद्रा–

धातु मुद्रा की सीमाओं के कारण पत्र–मुद्रा का विकास हुआ। पत्र–मुद्रा उन सभी दोषों से मुक्त है, जो धातु–मुद्रा में थे। पत्र–मुद्रा के उत्पादन में बहुत कम खर्चा आता है और इसका हस्तान्तरण भी बहुत सुविधाजनक है। बढ़ती माँग को पूरा करने के लिए पत्र–मुद्रा की पूर्ति आसानी से बढ़ाई जा सकती है। मुद्रा के विकास के क्रम में वर्तमान में तो पत्र मुद्रा से आगे बढ़कर साख मुद्रा तथा निकट मुद्रा भी मुद्रा की भूमिका अदा करने लगी है। जिनका अध्ययन हम आगे की कक्षाओं में करेंगे।

17.2 मुद्रा के कार्य तथा अर्थव्यवस्था में मुद्रा की भूमिका

मुद्रा के कार्यों को अर्थव्यवस्था में मुद्रा की भूमिका के रूप में देखा जा सकता है। मुख्य तौर पर मुद्रा विनिमय के माध्यम, मूल्य का मापक, विलम्बित भुगतानों के एक मानक तथा मूल्य के भण्डार का कार्य करती है। साथ ही यह अनेक अन्य गतिशील कार्यों को पूरा करके भी अर्थव्यवस्था में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

मुद्रा के विभिन्न कार्य

(क) विनिमय का माध्यम–

एक अर्थव्यवस्था में मुद्रा की आधारभूत भूमिका विनिमय के एक माध्यम या भुगतान के एक साधन के रूप में काम करने की होती है। मुद्रा का यह कार्य वस्तु–विनिमय प्रणाली की आवश्यकताओं के दोहरे संयोगों की समस्या को समाप्त कर देता है। यह मुद्रा विनिमय के माध्यम के रूप में कार्य करती है। यही वह विशिष्ट गुण है जो मुद्रा को अन्य संपदाओं से पृथक करता है। मुद्रा का माध्यम के रूप में उपयोग विनिमय क्रिया को सुविधाजनक बना देता है।

(ख) खाते की इकाई या मूल्य का मापक–

इसका तात्पर्य है कि मुद्रा मूल्य के सामान्य मापक का कार्य करती है। इसकी सहायता से सभी वस्तुओं और सेवाओं के विनिमय मूल्य को मुद्रा के रूप में व्यक्त किया जा सकता है। विभिन्न पैमानों पर अनेक वस्तुओं और सेवाओं के विनिमय मूल्य को एक समान इकाई मुद्रा में व्यक्त करके एक उचित लेखा तंत्र बनाया जा सकता है यद्यपि मूल्य के एक मापक के रूप में मुद्रा की सबसे बड़ी समस्या यह है कि इसका स्वयं का मूल्य परिवर्तित होता रहता है।

(ग) विलम्बित भुगतानों की मानक–

मुद्रा वह इकाई है, जिसके द्वारा स्थगित या भावी भुगतान सरलता से निपटाये जा सकते हैं। जो भुगतान तत्काल न करके भविष्य के लिये टाल दिए जाते हैं, वे स्थगित भुगतान कहलाते हैं। चूँकि ऋण भी एक प्रकार का स्थगित भुगतान है। अतः ऋणों को भी मुद्रा के रूप में चुकाया जाना सर्वाधिक सरल है। मुद्रा का मूल्य अन्य सम्पदाओं की तुलना में अधिक स्थिर रहता है तथा इसमें सामान्य स्वीकृति का गुण पाया जाता है अतः मुद्रा को स्थगित भुगतानों का श्रेष्ठ मानक माना जाता है।

(घ) मूल्य का भंडार–

इसका तात्पर्य है कि लोग अपनी धन तथा सम्पदा को मुद्रा के रूप में रख सकते हैं। मुद्रा मूल्य के संचय के रूप में भी कार्य करती है। मुद्रा के मूल्य का तात्पर्य मुद्रा की क्रय शक्ति से है। मुद्रा मूल्य का एक मात्र भण्डार नहीं है। अन्य वस्तुयें तथा सम्पदायें भी मूल्य के भण्डार का कार्य करती हैं तथा इस संदर्भ में मुद्रा से प्रतियोगिता करती हैं। मूल्य के भण्डार के रूप में मुद्रा विशिष्ट है क्योंकि यह सर्वाधिक तरल परिसम्पति है।

इस प्रकार मुद्रा वह वस्तु है, जो सामान्य रूप से विनिमय के माध्यम, मूल्य के मापक, मूल्य के संचय तथा स्थगित भुगतानों के मानक के रूप में प्रयोग की जाती है। वाकर तथा हार्टले विदर्स के अनुसार–''मुद्रा वह है, जो मुद्रा का कार्य करे''। क्राउथर के अनुसार मुद्रा की परिभाषा किसी भी वस्तु के रूप में दी जा सकती है, जिसे साधारणतः विनिमय का माध्यम स्वीकार किया जाता हो और इसके साथ ही जो मूल्य के मापक और मूल्य के संचय का भी कार्य करती हो।

(ड) मुद्रा के अन्य कार्य तथा अर्थव्यवस्था में भूमिका–

मुद्रा की सहायता से मूल्य का हस्तान्तरण सुविधाजनक हो जाता है। मुद्रा अर्थव्यवस्था में साख का आधार प्रदान करती है। लोग अपनी आय का एक हिस्सा बैंकों में मुद्रा के रूप में जमा करवाते हैं। इस जमा धन से ही बैंक साख का सृजन करते हैं। मुद्रा ने पूँजी को गतिशीलता प्रदान करके भी अर्थव्यवस्था में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। मुद्रा के कारण ही पूँजी को एक उद्योग से दूसरे उद्योग में तथा एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना संभव हुआ है।

मुद्रा की सहायता से ही बचतों को निवेशों में परिवर्तित किया जाना संभव हुआ। अर्थव्यवस्था में बचतकर्त्ता तथा निवेशक दो अलग–अलग वर्ग हैं । बचतकर्त्ता अपनी बचतों को मुद्रा के रूप में बैंक आदि वित्तीय संस्थाओं में जमा करवा देते हैं। ये संस्थाए व्यवसायियों को निवेश हेतु यह मुद्रा उधार दे देती हैं। फर्में या व्यवसायी मुद्रा को किसी उत्पादकीय निवेश में लगा देते हैं। इससे अर्थव्यवस्था की उत्पादन क्षमता में वृद्धि होती है तथा अर्थव्यवस्था आर्थिक विकास के पथ पर अग्रसर होती है।

निवेश– निवेश का तात्पर्य उस व्यय से है जो अर्थव्यवस्था में वास्तविक उत्पादक सम्पदा के स्टॉक में वृद्धि करता है।

मुद्रा के द्वारा ही उपभोक्ता अधिकतम संतुष्टि या कल्याण की स्थिति को प्राप्त कर सकता है। चूँकि मुद्रा आसानी से विभाज्य है अतः उपभोक्ता अपनी मुद्रा को विभिन्न वस्तुओं और सेवाओं पर इस प्रकार व्यय कर सकता है कि उसे अधिकतम संतुष्टि प्राप्त हो। मुद्रा उपभोक्ताओं को वस्तुओं के चुनाव की स्वतंत्रता भी प्रदान करती है।

मुद्रा उत्पादन के क्षेत्र में भी महती भूमिका अदा करती है। मुद्रा के द्वारा श्रम–विभाजन एवं विशिष्टीकरण को अपनाने से बड़े पैमाने पर उत्पादन सम्भव हो पाया है। विशिष्टीकरण तब घटित होता है जब एक आर्थिक संसाधन एक विशिष्ट वस्तु या सेवा को उत्पादित करता है। जब उत्पादक कार्य को विभिन्न श्रमिकों में उपविभाजित कर दिया जाता है तथा प्रत्येक इकाई श्रम वस्तु या सेवा के उत्पादन में एक विशिष्ट कार्य करता है तो इसे श्रम–विभाजन कहा जाता है। श्रम–विभाजन तथा विशिष्टीकरण से उत्पादकीय कुशलता में वृद्धि होती है तथा उत्पादन का उच्च स्तर प्राप्त होता है । मुद्रा के अभाव में समस्या यह थी कि जो उत्पादन प्राप्त हुआ उसका उत्पादन में संलग्न सभी इकाइयों में वितरण कैसे हो? मुद्रा के माध्यम से उत्पादन में संलग्न विभिन्न उत्पादक इकाइयों में उत्पादन का वितरण सम्भव है। प्राप्त कुल उत्पादन या वस्तु को विभाजित किया जाना सदैव सम्भव नहीं है लेकिन उसके मूल्य का मुद्रा के माध्यम से सभी उत्पादक इकाइयों में उचित आर्थिक नियमों का पालन करते हुए वितरण किया जा सकता है। मुद्रा के कारण ही राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय व्यापार में तेज वृद्धि सम्भव हुई है। वस्तु विनिमय प्रणाली में व्यापार का क्षेत्र सीमित होता है तथा इतनी अधिक मात्रा में व्यापार सम्भव नहीं होता।

वर्तमान समय में राज्य के कल्याणकारी स्वरूप को अत्यधिक बल मिला है। राज्य या सरकार द्वारा अपनी जनता के कल्याण हेतु अनेक योजनाएँ चलायी जा रही हैं। इन योजनाओं पर

सरकार को अत्यधिक व्यय करना होता है। इस व्यय की पूर्ति सरकार कर एवं सार्वजनिक ऋणों से करती है, जो मुद्रा के रूप में ही प्राप्त किये जा सकते हैं। वर्तमान में मानव का विकास जिस स्तर पर पहुँचा है, वह मुद्रा के आविष्कार से ही सम्भव हुआ है। सम्भवतः मनुष्य के जीवन का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है जहाँ मुद्रा की कोई भूमिका नहीं हो। मुद्रा एक साधन है, वह साध्य नहीं है।

17.3 बचत तथा साख

वित्तीय संस्थाओं के संम्बध में गहनता से जानने के लिए यह आवश्यक है कि बचत एवं साख की अवधारणाओं को समझा जाये। बचत और साख की अवधारणाओं को समझने के लिए हमें निम्नांकित तीन स्थितियों पर विचार करने की आवश्यकता है–

स्थिति–1 पंकज राजस्थान के सीकर जिले के कटराथल गांव में अपने माता–पिता, दो भाई एवं एक बहिन के साथ रहता है। वह एक शिक्षित एवं ऊर्जावान युवक है। उसने एक अच्छे संस्थान से व्यवसायिक शिक्षा प्राप्त की है तथा वह अपना स्वयं का व्यवसाय स्थापित करना चाहता है। उसके पास व्यवसाय के अनेक विकल्प हैं तथा उसे बाजार की अच्छी समझ है। वह व्यवसाय के तरीकों को भी भली प्रकार जानता है। फिर भी पूँजी के अभाव में वह स्वयं का व्यवसाय स्थापित नहीं कर पा रहा है। उसके पिता एक सामान्य कृषक हैं जो परिवार की आवश्यकताओं को ही पूरा कर पाते हैं। इस स्थिति में व्यवसाय स्थापित करने हेतु पंकज के पास एकमात्र विकल्प है कि वह आवश्यक पूँजी उधार प्राप्त करे।

स्थिति–2 संजय झुन्झुनू जिले के राजपुरा गांव में रहता है। उसके माता–पिता वृद्ध हैं तथा सामान्यतया बीमार रहते हैं। तीन भाई–बहनों में वह सबसे बड़ा तथा परिवार का एकमात्र कमाने वाला सदस्य है। उसके पास 2 हेक्टेयर का छोटा–सा खेत है। वह इसी खेत में कृषि–कार्य करके प्राप्त आय से अपने परिवार का गुजारा चलाता है। परिवार के सभी सदस्यों की आवश्यकताओं को पूरा करने का दायित्व उसी का है। कृषि–कार्य से प्राप्त होने वाली आय उसके परिवार की आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु अपर्याप्त है। परिवार की मूलभूत आवश्यकताओं को संतुष्ट करने हेतु आवश्यक है कि संजय किसी व्यक्ति या संस्था से आवश्यक धन उधार प्राप्त करे।

स्थिति–3 नितेश तथा उसकी पत्नी चाँदनी जयपुर में रहते हैं। नितेश एक बैंक कर्मी है तथा उसकी पत्नी भी सरकारी सेवा में है। दोनों मितव्ययी भी हैं तथा उन्हें विरासत में भी अच्छा आर्थिक आधार मिला है। दोनों अपनी आय के छोटे–से हिस्से से अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को संतुष्ट कर लेते हैं। अतः इनके पास आय का एक पर्याप्त हिस्सा बचत के रूप में रह जाता है।

यहाँ स्थिति 1 में पंकज को स्वयं का व्यवसाय स्थापित करने हेतु तथा स्थिति 2 में संजय को उपभोग हेतु उधार प्राप्त करने अर्थात ऋण लेने की आवश्यकता है। अर्थशास्त्र में ऋण या उधार प्रदान करने को ही साख प्रदान करना कहा जाता है। बोलचाल की भाषा में साख शब्द वित्तीय सुदृढ़ता की प्रतिष्ठा को भी बताता है जिसके आधार पर व्यक्ति या संस्था भविष्य में भुगतान के वायदे के आधार पर ऋण प्राप्त कर सकते हैं या बगैर नगद भुगतान किये वस्तुयें तथा सेवायें प्राप्त कर सकते हैं। स्पष्ट है कि अर्थशास्त्र में साख शब्द का उपयोग ऋण के वित्तीयन (ऋण के लिए वित्त उपलब्ध करवाने) हेतु लिया जाता है। जिस प्रकार विनिमय में एक पक्ष वस्तु क्रय करता है, तो दूसरा पक्ष विक्रय करता है। क्रय तथा विक्रय एक ही सौदे के दो पक्ष हैं। इसी प्रकार वित्त या कोषों के लेने–देन में एक पक्ष उधार या ऋण प्राप्त करता है तो दूसरा पक्ष साख (उधार या ऋण) प्रदान करता है। इस प्रकार वित्तीय लेन–देन में जितनी राशि ऋण की प्राप्त होगी, उतनी ही राशि प्रदत साख की होगी।

स्थिति 3 पर विचार करें, तो हम पाते हैं कि नितेश तथा चाँदनी के पास आय का एक बड़ा हिस्सा अप्रयुक्त रह जाता है। आय का वह भाग जिसे उपभोग नहीं किया गया, बचत कहलाता है। अतः उपभोग पर आय का आधिक्य ही बचत है।

यहाँ अनेक प्रश्न उत्पन्न होते हैं। पंकज को व्यवसाय स्थापित करने हेतु पूँजी कहाँ से उपलब्ध होगी? संजय को अपने परिवार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए ऋण कहाँ से प्राप्त होगा? नितेश तथा चाँदनी अपनी बचतों को कहां सुरक्षित रखेंगे? क्या नितेश तथा चाँदनी अपनी बचतों को सीधे ही पंकज तथा संजय को उधार दे सकते हैं? नितेश तथा चाँदनी द्वारा पंकज तथा संजय को सीधे ही उधार दिया तो जा सकता है लेकिन इसमें अनेक व्यावहारिक समस्याएं उत्पन्न होने की भी प्रबल सम्भावना है। प्रथम यदि नितेश तथा चाँदनी यह नहीं जानते कि पंकज तथा संजय का आर्थिक व्यवहार कैसा है, तो उन्हें ऋण देने पर सदैव अपनी गाढ़ी कमाई के डूबने का भय बना रहेगा। द्वितीय, यदि किसी कारण से उन्हें पैसे की अचानक आवश्यकता होती है तो पंकज तथा संजय अल्पसूचना पर पैसे लौटाने में समर्थ हों या नही हों। तृतीय, यह भी सम्भव है कि नितेश तथा चाँदनी का पंकज तथा संजय से कोई परिचय ही नहीं हो। वास्तविक रूप में ऋण देने वाला तथा अन्तिम रूप से ऋण लेने वाला दो अलग–अलग पक्ष होते हैं और इनके बीच एक सेतु की आवश्यकता होती है, जो इन दोनों पक्षों को जोड़ सके। यह भूमिका वित्तीय मध्यस्थ अदा करते हैं।

वित्तीय मध्यस्थ–

वित्तीय मध्यस्थ वे संस्थान तथा फर्म हैं जो वित्तीय

बाजार में जमाकर्ता तथा उधार लेने वालों के बीच एक सेतु या मध्यस्थ का कार्य करते हैं। ये संस्थान उन व्यक्तियों से धन प्राप्त करते हैं जो अपनी आय से कम खर्च करते हैं अर्थात् बचत करते हैं तथा उन व्यक्तियों एवं संस्थाओं को साख उपलब्ध करवा देते हैं, जिन्हें उत्पादन या उपभोग हेतु धन की आवश्यकता है। जब बचतकर्त्ता अपनी बचतों को इनके पास जमा करवाते हैं, तो उन्हें उचित ब्याज प्राप्त होता है तथा धन डूबने का जोखिम बहुत कम होता है। जमाकर्ताओं के पास यह भी सुविधा होती है कि उन्हें जब जरूरत हो, वे अपनी जमाओं को तुरन्त या अल्पसूचना पर वापस ले सकते हैं। इसी प्रकार उधार लेने वाले व्यक्तियों तथा संस्थाओं को भी वित्तीय मध्यस्थों से अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। वित्तीय मध्यस्थों के पास सदैव धन की उपलब्धता बनी रहती है। ये उचित ब्याज दर तथा स्वीकार्य आसान शर्तों पर साख प्रदान करते हैं। बैंक एक महत्त्वपूर्ण वित्तीय मध्यस्थ है।

17.4 साख के संस्थागत तथा गैर संस्थागत स्रोत

अर्थव्यवस्था में अनेक लोग ऐसे होते हैं, जिनके व्यय उनकी आय से अधिक होते हैं। इस आधिक्य व्यय को पूरा करने के लिए उन्हे ऋण लेने की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार अनेक लोग जो कि उत्पादन–क्रिया या व्यवसाय में संलग्न हैं, उन्हें अपने व्यवसाय को आगे बढ़ाने हेतु अधिक पैसों की आवश्यकता होती है, जिसे वे ऋण लेकर पूरा करते हैं। अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए लोग विभिन्न वित्तीय स्रोतों से साख प्राप्त कर सकते हैं। दूसरी ओर ऐसे भी लोग होते हैं, जिनके व्यय उनकी आय से कम है। यह अपनी बचतों पर ब्याज कमाना चाहते हैं। अतः ये अपनी बचतों को विभिन्न वित्तीय संस्थाओं मे जमा करवा देते हैं। वित्तीय संस्था वह संस्था होती है, जो वित्तीय लेन–देन के कार्य (जैसे–जमा, ऋण, निवेश आदि) सम्पन्न करती है। जैसे बैंक, सहकारी समिति, साहूकार, देशी बैंकर आदि। इन वित्तीय संस्थाओं को संस्थागत तथा गैर संस्थागत स्रोतों में वर्गीकृत किया जाता है।

संस्थागत साख प्रदान करने वाली संस्थाएं सरकार और भारतीय रिजर्व बैंक के पास पंजीकृत होती हैं। इनका नियमन, नियंत्रण तथा निर्देशन भारतीय रिजर्व बैंक तथा सरकार द्वारा किया जाता है। ये अपनी सभी क्रियाओं के सम्बन्ध में अपनी नियामक संस्थाओं को सूचित करते हैं। इन संस्थाओं द्वारा केवल लाभ के लिए कार्य नहीं किया जाता है। इन्हें महत्त्वपूर्ण सामाजिक दायित्वों को भी वहन करना होता है। ये संस्थाए गरीब एवं कमजोर वर्ग को भी साख प्रदान करती हैं। आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के वित्तीय समावेशन के द्वारा आर्थिक समानता की स्थापना करने में इनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

वित्तीय समावेशन–

समाज के गरीब, कमजोर, पिछड़े तथा निम्न आय वर्ग को वहनीय लागत पर वित्तीय सेवायें प्रदान करके उन्हें वित्तीय सेवाओं से जोड़ना वित्तीय समावेशन कहलाता हैं।

17.5 वाणिज्यिक बैंक–

हमने देखा कि नितेश तथा चाँदनी अपनी आय से कम खर्च करते हैं। अपनी इन बचतों को वह इस प्रकार प्रबंधित करना चाहेंगे कि उन्हें धन डूबने का भय भी नहीं हो तथा जमा पूँजी पर उचित ब्याज भी प्राप्त हो। जो लोग थोड़ा–थोड़ा करके बचत करते हैं, वे चाहते हैं कि कोई ऐसी संस्था हो, जो उनकी बचतों को सुरक्षित रख सके तथा उन्हें आवश्यकता होने पर वह अपनी बचतों को आसानी से वापस प्राप्त कर सके। बैंक इस कार्य को सम्पन्न करने वाले महत्त्वपूर्ण वित्तीय मध्यस्थ हैं। बचत करने वालों से रुपये जमा लेकर बैंक यह रुपये उन लोगों को उधार दे देते हैं जिन्हें उत्पादन या उपभोग हेतु धन की आवश्यकता है। बैंक पूँजी का उपयोग करने वालों तथा बचत करने वालों के बीच एक सेतु का कार्य करता है। बैंक एक महत्त्वपूर्ण सुविधा यह भी प्रदान करते हैं कि आवश्यकता पड़ने पर बचतकर्ता बैंक खातों में जमा धन को निकाल सकता है, इसलिए इस जमा को माँग जमा कहा जाता है। यह सुविधा इसे मुद्रा का महत्त्वपूर्ण लक्षण (विनिमय का माध्यम) प्रदान करती है। आपने नकद की बजाय चैक से भुगतान के बारे में सुना होगा। चैक से भुगतान के लिए भुगतानकर्त्ता, जिसका किसी बैंक में खाता है, एक निश्चित रकम के लिए चैक काटता है। चैक एक ऐसा आदेश–पत्र है, जो बैंक को किसी व्यक्ति के खाते से चैक पर नामित व्यक्ति को एक विशेष राशि के भुगतान का आदेश देता है।

अग्रांकित चैक टैगोर शिक्षण संस्थान ने राजेन्द्र प्रसाद को 500 रु. का भुगतान करने के लिए जारी किया है। इस पर दो समानान्तर तिरछी रेखाएं अंकित की गयी है। यह रेखांकित चैक इस बात का सूचक है कि यह प्राप्तकर्त्ता के खाते में ही जमा होगा। ध्यान से देखें तो स्पष्ट होता है कि रेखांकित चैक में सात पूर्तियां की जाती है–

(1) दो समानान्तर तिरछी रेखाएं
(2) जारी करने का दिनांक
(3) भुगतान प्राप्तकर्त्ता का नाम
(4) भुगतान की राशि अंकों में
(5) भुगतान की राशि शब्दों में
(6) चैक जारी करने वाले की खाता संख्या
(7) चैक जारी करने वाले के हस्ताक्षर

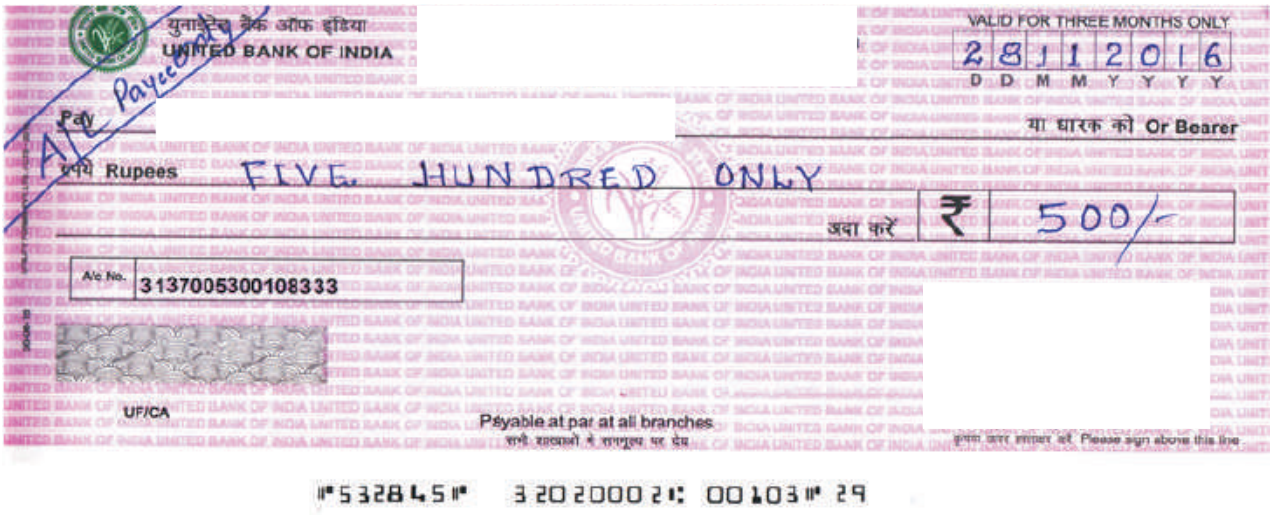

प्रचलन में गैर रेखांकित चैक भी लिखे जाते हैं। इनसे भुगतान प्राप्तकर्त्ता का कोई भी प्रतिनिधि बैंक में जाकर भुगतान प्राप्त कर सकता है। यह चैक लिखना जोखिमपूर्ण होता है।

इस तरह हम देखते हैं कि माँग जमा में मुद्रा के अनिवार्य लक्षण मिलते हैं। माँग जमा के बदले चैक लिखने की सुविधा से बिना नकद का उपयोग किये सीधा भुगतान करना सम्भव हो जाता है । एक बड़ा प्रश्न यह उठता हैं कि बैंक जनता से जो धन जमा खातों में स्वीकार करते हैं, उसका क्या करते हैं ? बैंक जमा रकम का एक छोटा–सा हिस्सा अपने पास नकद रूप में रखते हैं। इस हिस्से का प्रावधान एक दिन में जमाकर्ताओं द्वारा धन निकालने की सम्भावना के आधार पर किया जाता है। चूँकि किसी एक विशेष दिन में केवल कुछ जमाकर्ता ही नकद निकालने के लिए आते हैं इसलिए बैंक का काम इतने नकद से हो जाता है। बैंक जमा राशि के एक बड़े भाग को ऋण देने के लिए उपयोग में लेते हैं। इस आधार पर कहा जा सकता है कि बैंक वह संस्थान है, जो जनता से माँगे जाने पर पुनर्भुगतान योग्य या चैक द्वारा निकलवाने योग्य जमाएं स्वीकार करता है तथा ऋण प्रदान करने का कार्य भी करता है। चैक द्वारा निकलवाने योग्य जमाओं को स्वीकार करना बैंक का एक पृथक तथा विशेष कार्य है। एक वाणिज्यिक बैंक वह वित्तीय संस्थान है जो जमाएं स्वीकार करना, व्यावसायिक ऋण प्रदान करना आदि सेवायें प्रदान करता है।

17.5.1 वाणिज्यिक बैंकों की भूमिका–

वर्तमान में अर्थव्यवस्था के विकास एवं सुदृढ़ता में वाणिज्यिक बैंकों का महत्त्व अकथनीय है। आर्थिक विकास में वाणिज्यिक बैंकों के महत्त्व को निम्न बिन्दुओं में देखा जा सकता है–

(1) आर्थिक विकास हेतु ऊंची बचत दर आवश्यक है। वाणिज्यिक बैंक जनता की बचतों को सुरक्षित रखकर उन्हें ब्याज भी प्रदान (2) जनता से जो बचतें जमा होती हैं, उन्हें गतिमान करके बैंक अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न उत्पादकों तथा निवेशकों तक पहुँचाते हैं। यदि बैंक नहीं होते तो बचतें सदैव बचतकर्त्ता के पास ही पड़ी रहतीं तथा कभी भी उत्पादन हेतु उपयोग में नहीं आतीं।

(3) बैंक संसाधनों का अनुकूलतम आवंटन करते हैं। प्राप्त बचतों को बैंक उन क्षेत्रों को उधार देते हैं, जहाँ लाभ की दर अर्थात प्रतिफल की दर अधिकतम हो। साथ ही बैंक उन क्षेत्रों में भी संसाधन आवंटन करते हैं जो सामाजिक कल्याण की दृष्टि से वांछनीय हो ।

17.5.2 वाणिज्यिक बैंक के कार्य

(क) जमायें स्वीकार करना

बैंक द्वारा प्रदत्त सेवाओं में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और प्रथम कार्य जमायें स्वीकार करना है। बैंक व्यक्तियों, फर्मों एवं अन्य संस्थाओं से जमायें प्राप्त करते हैं। व्यापक रुप से ये जमायें तीन प्रकार की होती है।

(अ) चालू खाते की जमायें,

(ब) बचत खाते की जमायें तथा

(स) स्थायी जमायें।

व्यावसायियों द्वारा चालू खातें में धन जमा करवाया जाता है। वे इसमें बार–बार लेनदेन कर सकते है। बैंक इन चालू जमाओं पर बहुत कम या शून्य ब्याज देते हैं। सामान्य जनता द्वारा अपनी धन राशि बचत खाते में बचत जमा के रूप में रखी जाती है । बचत खाते की जमाओं में से रुपये निकलवाने में तथा बचत खाते में किये जाने वाले लेन–देन पर कुछ प्रतिबंध होते हैं। इन जमाओं पर बैंक उचित ब्याज भी प्रदान करता है। चालू तथा बचत खाते की जमाओं

को संयुक्त रूप से माँग जमायें कहा जाता है। बैंक सर्वाधिक ब्याज स्थायी जमाओं पर प्रदान करते हैं। ये लम्बी अवधि हेतु होती है, अतः इन्हें अवधि या समय जमायें भी कहा जाता है।

(ख) ऋण प्रदान करना–

वाणिज्यिक बैंक अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों जैसे कृषि, उद्योग, व्यापार आदि को ऋण प्रदान करते हैं। यह ऋण नकद साख, अधिविकर्ष आदि अनेक रूपों में प्रदान किया जाता है।

अधिविकर्ष – खाता धारक को खाते में जमा राशि से अधिक राशि निकालने की छूट देकर ऋण प्रदान करना।

बैंक द्वारा विभिन्न व्यक्तियों एवं संस्थाओं को विभिन्न उद्धेश्यों से दिये गये ऋणों पर ब्याज की दर भी अलग–अलग होती है। बैंक जमा पर जो ब्याज देते हैं, उससे अधिक ब्याज दिये गये ऋणों पर लेते हैं। कर्जदारों से लिए गये ब्याज और जमाकर्ताओं को दिये गये ब्याज के बीच का अन्तर बैंकों की आय का प्रमुख स्रोत है।

(ग) अन्य कार्य –

जमायें स्वीकार करने तथा ऋण प्रदान करने के अतिरिक्त बैंक अपने ग्राहकों को कई अन्य प्रकार की सेवायें भी प्रदान करते हैं । बैंक बिलों तथा चेकों का संग्रहण करते हैं। बीमा की किश्त आदि का नियमित भुगतान करते हैं। लॉकर की सुविधा प्रदान करके मूल्यवान वस्तुओं को सुरक्षित रखते हैं। बैंक अनेक सांख्यिकीय सूचनाएं एकत्रित करके उन्हें विभिन्न ऐजेन्सियों को उपलब्ध करवाते हैं। वे धन के हस्तांतरण की सुविधा प्रदान करते हैं। सार रूप में यह कहा जा सकता है कि आर्थिक विकास तथा वित्तीय समावेशन में बैंक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

बैंक संस्थागत स्रोत जमाओं पर उचित ब्याज प्रदान करती हैं तथा इनके द्वारा प्रदत्त साख पर ब्याज की दर गैर संस्थागत स्रोतों द्वारा ली जाने वाली ब्याज की दर की तुलना में बहुत कम होती हैं। संस्थागत स्रोत अपने सभी लेन देन का लिखित रिकॉर्ड रखते हैं। इन संस्थाओं के कार्य दिवस तथा कार्य घण्टे निश्चित होते हैं। अतः यह सभी दिनों में सभी समय वित्तीय लेन–देन के लिए उपलब्ध नहीं होते हैं। यद्यपि इनके द्वारा साख प्रदान करने की प्रक्रिया थोड़ी जटिल तथा धीमी होती है, लेकिन ये कभी भी शोषणकारी गतिविधियों में संलग्न नहीं होते हैं। बैंक तथा सहकारी समितियां संस्थागत वित्तीय स्रोत हैं। गैर संस्थागत वित्तीय स्रोत वे वित्तीय संस्थाएं होती हैं जो वित्त के लेन–देन के सम्बन्ध में सरकार तथा भारतीय रिजर्व बैंक के पास पंजीकृत नहीं होती तथा इनके द्वारा जारी दिशा निर्देशों का पालन नहीं करती हैं। ये संस्थाएं मौद्रिक प्राधिकरण के नियमन तथा नियंत्रण से बाहर होती हैं। ऐसा कोई नियामक संगठन या केन्द्र नहीं होता जो इन गैर संस्थागत वित्तीय स्रोतों की गतिविधियों को निर्देशित करता हो।

सामान्यतः गैर संस्थागत स्रोतों द्वारा ऋणियों से ली जाने वाली ब्याज की दर बहुत ऊँची होती हैं। देशी बैंकर, साहूकार, भू–स्वामी, रिश्तेदार आदि को सामान्यतया गैर संस्थागत वित्तीय स्रोतों में शामिल किया जाता हैं। ये संस्थाएं बहुत लोचशील होती हैं। इनकी गतिविधियाँ समय बाधित नहीं होती । इनके द्वारा साख प्रदान करने की प्रक्रिया बहुत सरल तथा सीधी होती है। इनके द्वारा बहुत कम कागजी कार्यवाही की जाती है। इन संस्थाओं द्वारा अपने लेन–देन का बहुत कम रिकॉर्ड रखा जाता हैं इन पर लेनदेन के रिकॉर्ड में हेरा–फेरी के गम्भीर आरोप भी लगते रहते हैं।

गैर संस्थागत वित्तीय स्रोत अधिकाशंतः स्थानीय होते हैं और यह क्षेत्र की संस्कृति, प्रथाओं, रीति–रिवाजों से सुपरिचित होते हैं। अतः ये साख प्रदान करने एवं दिये गए उधार की वसूली में बहुत लोचपूर्ण व्यवहार प्रदर्शित करते हैं। ये संस्थान ऋणी की क्रियाओं, आर्थिक स्थिति एवं आर्थिक व्यवहार, भुगतान करने की क्षमता आदि से सुपरिचित होते हैं। अतः इनके द्वारा प्रदत्त साख की अधिकांशतः वसूली हो जाती है। साथ ही अपनी मुद्रा को वसूल करने के लिए ये अनेक बार अनुचित साधनों का भी उपयोग भी करते हैं।

17.6 देशी बैंकर

इनके द्वारा भी भारत में बैंकिंग व्यवसाय सम्पन्न किया जाता रहा है। यह निजी फर्म या व्यक्ति होते हैं जो बैंक की तरह कार्य करते हैं। भारत में आधुनिक वाणिज्यिक बैंकों के विकास से पूर्व बैंकिंग का कार्य पूर्णतः इन्हीं के द्वारा सम्पन्न किया जाता था । ये भारत में गैर संस्थागत साख का महत्त्वपूर्ण स्रोत रहे हैं। देशी बैंकर द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले प्रमुख कार्य –

(1) जनता से जमायें स्वीकार करना।

(2) अपने ग्राहकों को विभिन्न प्रकार की सम्पत्तियाँ गिरवी रखकर उन्हें ऋण प्रदान करना तथा ग्राहक की साख के आधार पर सम्पत्ति को गिरवी रखे बिना भी ऋण प्रदान करना।

(3) एक स्थान से दूसरे स्थान तक कोषों को स्थानान्तरित करना।

(4) बैकिंग कार्य के साथ–साथ अपना व्यवसाय भी चलाना।

(5) छोटे व्यापारियों तथा छोटे उद्यमियों के साथ लेनदेन करना।

(6) ऋणी को वित्तीय स्थिति एवं व्यवसाय के संबंध में निजी जानकारी के आधार पर ऋण प्रदान करना।

(7) ग्राहकों के लिए बैंकर ही नहीं अपितु मित्र एवं सलाहकार भी बनना।

17.7 साहूकार

साख के गैर संस्थागत स्रोतों में साहूकार की भी

उल्लेखनीय भूमिका होती है। साहूकार शुद्ध रूप से स्वयं की पूंजी को उधार देते हैं। यह जनता से जमायें स्वीकार नहीं करते। यह सामान्यतः छोटे वैयक्तिक ऋण प्रदान करते हैं। इनके द्वारा ग्राहकों से ऊंची ब्याज दर ली जाती है। जिन लोगों की बैंकिग क्रियाओं तक पहुँच नहीं होती वे सामान्यतः साहूकारों से ही ऋण प्राप्त करते हैं। आमतौर पर साहूकार भी सम्पति को गिरवी रखकर ग्राहकों को ऋण प्रदान करते हैं परन्तु ग्राहक की साख के आधार पर किसी सम्पति को गिरवी रखें बिना भी उधार दे देते हैं।

ऋणियों से ऊँची ब्याज दर वसूल करने के कारण इन्हें शोषक भी माना जाता है। आजकल वित्तीय समावेशन एवं बैकिंग सेवाओं के विस्तार के फलस्वरूप देशी बैंकर तथा साहूकारों का महत्त्व लगातार घट रहा है। साहूकारों तथा देशी बैंकर के अलावा भूस्वामी, मित्र एवं रिश्तेदार भी गैर संस्थागत साख के महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं।

17.8 स्वयं सहायता समूह

निर्धन परिवार ऋण के लिए अब भी गैर संस्थागत स्रोतों पर निर्भर हैं। ऐसा क्यों है ? भारत के विभिन्न ग्रामीण क्षेत्रों में अब भी बैंक नहीं हैं। बैंक से कर्ज लेना भी गैर संस्थागत स्रोत से कर्ज लेने की तुलना में ज्यादा मुश्किल हैं। बैंक से कर्ज लेने के लिए ऋणाधार और विशेष कागजातों की जरूरत पड़ती है। ऋणाधार की अनुपब्लधता एक प्रमुख कारण है, जिससे गरीब बैंकों से ऋण नहीं ले पाते। दूसरी ओर, गैर संस्थागत ऋणदाता जैसे साहूकार, इन कर्जदारों को व्यक्तिगत स्तर पर जानते हैं और इस कारण अक्सर बिना ऋणाधार के भी ऋण देने के लिए तैयार हो जाते हैं। कर्जदार जरूरत पड़ने पर पुराना ऋण चुकाए बिना भी, नया कर्ज लेने के लिए साहूकार के पास जा सकते हैं, लेकिन साहूकार ब्याज की दर बहुत ऊँची रखते हैं, लेन–देन की लिखा पढ़ी भी पूरी नहीं करते और निर्धन कर्जदारों को तंग करते हैं। हाल के वर्षों में लोगों ने गरीबों को उधार देने के कुछ नये तरीके अपनाने की कोशिश की है। इन में से एक विचार ग्रामीण क्षेत्रों के गरीबों विशेषकर महिलाओं, को छोटे–छोटे स्वयं सहायता समूहों में संगठित करने और उनकी बचत पूँजी को एकत्रित करने पर आधारित है। एक स्वयं सहायता समूह में 15–20 सदस्य होते हैं, जो नियमित रूप से मिलते हैं और बचत करते हैं। प्रति व्यक्ति बचत 25 रुपये से लेकर 100 रुपये या इससे अधिक हो सकती है। यह परिवारों की बचत करने की उनकी क्षमता पर निर्भर करता है। सदस्य अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए छोटे कर्ज समूह से ही कर्ज ले सकते हैं। समूह इन कर्जों पर ब्याज लेता है, लेकिन यह साहूकार द्वारा लिए जाने वाले ब्याज से कम होता है। एक या दो वर्षों के बाद, अगर समूह नियमित रूप से बचत करता है, तो समूह बैंक से ऋण लेने योग्य हो जाता है। ऋण समूह के नाम पर दिया जाता है और इसका उद्देश्य सदस्यों के लिए स्वरोजगार के अवसरों का सर्जन करना है। उदाहरण के लिए सदस्यों को छोटे–छोटे कर्ज अपनी गिरवी रखी जमीन छुड़वाने के लिए, कार्यशील पूँजी की जरूरतें पूरी करने (बीज, खाद, बाँस और कपड़े खरीदने के लिए), घर बनाने, सिलाई की मशीन, हथकरघा, पशु इत्यादि खरीदने के लिए दिए जाते हैं।

बचत और ऋण गतिविधियों से सम्बन्धी ज्यादातर महत्त्वपूर्ण निर्णय समूह के सदस्य स्वयं लेते हैं। समूह दिए जाने वाले ऋण, उसका लक्ष्य, उसकी रकम, ब्याज दर, वापस लौटाने की अवधि आदि के बारे में निर्णय करता है। इस ऋण को लौटाने की जिम्मेदारी समूह की होती है। एक भी सदस्य अगर ऋण वापस नहीं लौटाता तो समूह के अन्य सदस्य इस मामले को गंभीरता से लेते हैं। इस प्रकार जब निर्धन महिलाएं अपने को स्वयं सहायता समूहों में संगठित कर लेती हैं तो बैंक इन्हें ऋण देने के लिए तैयार हो जाते हैं, यद्यपि उनके पास कोई ऋणाधार नहीं होता।

इस तरह, स्वयं सहायता समूह कर्जदारों को ऋणाधार की कमी की समस्या से उबारने में मदद करते हैं। उन्हें समयानुसार विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं के लिए एक उचित ब्याज दर पर ऋण मिल जाता है। इसके अतिरिक्त यह समूह ग्रामीण क्षेत्रों के गरीबों को संगठित करने में मदद करते हैं। इससे न केवल महिलाएँ आर्थिक रूप से स्वावलम्बी हो जाती हैं, बल्कि समूह की नियमित बैठकों के माध्यम से लोगों को एक आम मंच मिलता है, जहाँ वह विभिन्न के सामाजिक विषयों जैसे, स्वास्थ्य, पोषण और घरेलू हिंसा इत्यादि पर आपस में चर्चा कर पाते हैं।

17.9 चिटफण्ड

भारत में बचत प्रवृत्ति को बढ़ावा देने तथा ऋण उपलब्ध करवाने की दृष्टि से चिटफण्ड कम्पनियों की विशिष्ट भूमिका है। वह कम्पनी जो चिट योजना का प्रबन्ध, संचालन तथा निर्देशन करती है, चिटफण्ड कम्पनी कहलाती है। चिटफण्ड भारत में चलने वाली विशेष बचत एवं ऋण योजना है। यह पारस्परिक लाभ की एक योजना है। इसके अन्तर्गत योजना के सभी सदस्य एक अनुबन्ध का हिस्सा होते हैं जिसमें अपना निर्धारित अंश जमा करवाते हैं। इसमें कुल जमा राशि निविदा निकाल कर या नीलामी द्वारा योजना के किसी एक सदस्य को प्रदान कर दी जाती हैं। निविदा या नीलामी में सभी सदस्य भाग लेते हैं तथा जो सदस्य सबसे ज्यादा बट्टा कटवाकर राशि लेने को तैयार हो उसे पुरस्कृत क्रेता घोषित किया जाता है। यदि कोई भी सदस्य राशि लेने के लिए निविदा या नीलामी में भाग नहीं लेता है तो एक न्यूनतम राशि बट्टा काटकर लॉटरी से चिट निकालकर विजेता का नाम तय कर

लिया जाता है। प्रत्येक माह एक सदस्य को विजेता के रूप में पुरस्कार की राशि मिलती है। जो सदस्य योजना में एक बार विजेता हो जाता है उसे निविदा या नीलामी में पुनः शामिल नहीं किया जाता है अर्थात निविदा या नीलामी में योजना के गैर–पुरस्कृत सदस्य ही भाग ले सकते हैं। बट्टे की राशि ही लाभांश होती है जिसे सभी सदस्यों में समान रूप से बाँट दिया जाता है। लाभांश की राशि को घटाकर अगली किश्त की राशि निर्धारित कर दी जाती है। चिटफण्ड कम्पनी योजना के संचालन, प्रबन्धन एवं निर्देशन के लिए योजना के सदस्यों से अनुबंध में निर्धारित कमीशन प्राप्त करती है। योजना में विजेता को भी चिटफण्ड योजना की निर्धारित अवधि में प्रत्येक माह अपनी किश्त जमा करवानी होती है। चिटफण्ड योजनाएं संगठित वित्तीय संस्थाओं के अतिरिक्त मित्रों एवं रिश्तेदारों आदि असंगठित समूहों द्वारा भी चलाई जाती है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. मुद्रा वह होती है, जो विनिमय के माध्यम के रूप में सामान्य स्वीकृत हो। भारत की मुद्रा 'रुपया' है।
2. मुद्रा मुख्य रूप से विनिमय के माध्यम, मूल्य के मापक, मूल्य के संग्रह तथा विलम्बित भुगतानों के आधार का कार्य करती है।
3. भारत का केन्द्रीय बैंक भारतीय रिजर्व बैंक है।
4. मुद्रा के आविष्कार से पहले वस्तु–विनिमय प्रणाली चलन में थी। इस प्रणाली में वस्तुओं और सेवाओं का विनिमय प्रत्यक्ष रूप से वस्तुओं और सेवाओं के बदले में किया जाता है।
5. आय का वह भाग जिसे उपभोग नहीं किया गया हो, बचत कहलाता है।
6. साख शब्द का तात्पर्य एक पक्ष द्वारा दूसरे पक्ष को ऋण या उधार प्रदान करने से है।
7. वित्तीय मध्यस्थ वे व्यक्ति, संस्थान तथा फर्म होते हैं जो वित्तीय बाजार में जमाकर्ता तथा उधार लेने वाले के बीच मध्यस्थ का कार्य करते हैं।
8. संस्थागत वित्तीय स्रोत भारत सरकार तथा भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा नियमित, नियंत्रित तथा निर्देशित होते हैं।
9. गैर संस्थागत वित्तीय स्रोत भारत सरकार तथा भारतीय रिजर्व बैंक के नियंत्रण तथा नियमन से बाहर होती है।
10. सूक्ष्म ऋण प्रदान करने की दृष्टि से स्वयं सहायता समूह एक नवीन प्रवृत्ति है।
11. वित्तीय साक्षरता प्रदान करने हेतु भारतीय रिजर्व बैंक अनेक तरीकों से वित्तीय सूचनाओं तथा ज्ञान का प्रसार कर रही है।

अभ्यास प्रश्न

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. मुद्रा किसे कहते हैं?
2. विनिमय का अर्थ बताइये।
3. चैक से क्या आशय है?
4. भारतीय मुद्रा का क्या नाम है?
5. भारत का केन्द्रीय बैंक कौनसा है?
6. बचत से आप क्या समझते हैं?
7. भारतीय मुद्रा का प्रतीक चिह्न क्या है?
8. भारत सरकार द्वारा 2016 ई. में कौन–कौन से नोटों का विमुद्रीकरण किया गया है?
9. वित्तीय मध्यस्थ किसे कहते हैं?
10. ऋण की आवश्यकता किन कार्यों के लिए हो सकती है?
11. संस्थागत वित्तीय स्रोतों का नियंत्रण किसके द्वारा किया जाता है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. वस्तु विनिमय प्रणाली किसे कहते हैं?
2. वस्तु विनिमय प्रणाली में क्या कठिनाईयाँ थी?
3. मूल्य के मापक के रूप में मुद्रा के कार्य को समझाइये।
4. साख किसे कहते हैं?
5. धातु मुद्रा की क्या सीमाएं होती हैं?
6. वित्तीय संस्था किसे कहते हैं? उदाहरण सहित बताइये।
7. संस्थागत वित्तीय स्रोत किसे कहते हैं? उदाहरण सहित बताइये।
8. गैर संस्थागत वित्तीय स्रोतों के गुण तथा दोष बताइये।
9. देशी बैंकर किसे कहते हैं? इनकी तीन प्रमुख विशेषताएं बताइये।
10. साख के स्रोत के रूप में साहूकार को समझाइये।

निबन्धात्मक प्रश्न–

1. मुद्रा के विकास के विभिन्न चरणों की व्याख्या कीजिए।
2. मुद्रा के प्रमुख कार्यों की विस्तृत विवेचना कीजिए।
3. वाणिज्यिक बैंको के कार्यों का विस्तार से उल्लेख कीजिए।
4. अर्थव्यवस्था में मुद्रा की क्या भूमिका है? स्पष्ट कीजिए।
5. संस्थागत तथा गैर संस्थागत वित्तीय स्रोत में अन्तर बताइये।
6. स्वयं सहायता समूह क्या होते हैं? यह किस प्रकार ऋण प्रदान करने के परम्परागत तरीकों से भिन्न हैं?
7. देशी बैंकर व्यवस्था पर एक लेख लिखिए।

अध्याय–18

उपभोक्ता एवं विधिक जागरूकता तथा सूचना का अधिकार

मानव विकास के साथ–साथ मानवीय आवश्यकताऐं बढ़ने लगीं। आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मानव ने वस्तुओं का आदान प्रदान शुरू किया, धीरे–धीरे वस्तु विनिमय होने लगा, इसके बाद मुद्रा के रूप में कीमती धातुओं जैसे सोना, चांदी की बनी मुद्राओं का चलन शुरू हुआ। भारतीय इतिहास में वर्णन मिलता है, कि गायों को भी मुद्रा के रूप में प्रयोग किया जाता था। जब व्यक्ति किसी वस्तु या सेवा का मूल्य देकर उसे प्राप्त करके उपभोग करता अर्थात लाभ लेता है, तो वह उपभोक्ता कहलाता है। उप+भोक्ता अर्थात प्राप्त करके उपभोग करने वाला व्यक्ति। उपभोक्ता अधिनियम 1986 के अनुसार उपभोक्ता वह व्यक्ति है :

(i) किसी वस्तु या सेवा के प्रतिफल (मूल्य) का भुगतान कर दिया हो, अथवा भुगतान करने का वचन दिया हो।

(ii) प्रतिफल का आंशिक भुगतान कर दिया हो, अथवा आंशिक भुगतान कने का वचन दिया हो।

(iii) प्रतिफल का भुगतान विलम्बित भुगतान विधि के अनुसार करने का वचन दिया हो।

क्रय की गई वस्तु या सेवा से लाभ या सुविधा प्राप्त करने वाला अन्तिम व्यक्ति उपभोक्ता होता है। उपभोक्ता अधिनियम में उपभोक्ता दो वर्गों में बांटकर लाभान्वित किया गया है। (अ) माल का उपभोक्ता (ब) सेवा का उपभोक्ता

व्यक्ति (Person):–

अधिनियम में व्यक्ति शब्द में निम्नलिखित शामिल है :–

(i) पंजीकृत या अपंजीकृत फर्म

(ii) संयुक्त हिन्दू परिवार

(iii) सहकारी संस्था

(iv) व्यक्तियों का कोई संघ चाहे समितियों के पंजीयन अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत हों अथवा नहीं।

उपभोक्ता शोषण के कारण :–

व्यक्ति, जब किसी वस्तु या सेवा का प्रतिफल (मूल्य) भुगतान कर प्राप्त करता है या भाड़े पर लेता है, क्रेता के मूल्य के अनुसार वस्तु या सेवा से लाभ /सुविधा प्राप्त नहीं होती है, तब उस स्थिति को उपभोक्ता का शोषण कहा जाता है। उपभोक्ता शोषण के निम्नलिखित कारण हैं :–

1. वस्तु या सेवा की गुणवत्ता, मात्रा, शुद्धता तथा मानक पर ध्यान दिए बिना क्रय किया जाना।
2. वस्तु या सेवा के विभिन्न प्रकारों के उपलब्ध होने पर सही वस्तु या सेवा का चयन नहीं होना।
3. वस्तुओं से सम्बंधित लिखित व अलिखित पूर्ण जानकारी का अभाव होना।
4. वस्तुओं की पैकिंग पर लिखित प्रचार पर विश्वास कर लेना।
5. उपभोक्ताओं का अशिक्षित होना।
6. क्रय की गई वस्तु/सेवा के मूल्य के भुगतान की रसीद/केश/विल/क्रय संविदा आदि प्राप्त नहीं करना।
7. दूषित या हानिकारक वस्तु व सेवा के विरूद्ध उपभोक्ता द्वारा लिखित व उचित तरीके से शिकायत नहीं करना।
8. शिकायतों पर शीघ्र निर्णय नहीं होना।
9. उपभोक्ताओं का संगठित नहीं होना।
10. सरकार पर पूँजीपतियों/उद्योगपतियों का प्रभाव होना आदि।

उपभोक्ता शोषण के प्रकार :–

उपभोक्ता का शोषण कई प्रकार किया जाता रहा है। विशेष रूप से शोषण की स्थिति तब होती है जब वस्तुओं का उत्पादन अधिक पूँजीवादी, शक्तिशाली बड़ी कम्पनियाँ करने लगती हैं। शोषण को दो वर्गों में बांटा गया है। माल या वस्तु के रूप में शोषण व सेवा के रूप में शोषण, इनके प्रकार निम्नलिखित हैं :–

(अ) माल या वस्तु :–

1. तौल, मात्रा वजन तथा माप में कमी कना।
2. बताई गई या दर्शाई गई किस्म का नहीं होना।
3. अशुद्धता या मिलावट होना।
4. निर्धारित मूल्य से अधिक मूल्य वसूल करना।
5. वस्तु की अपेक्षित क्षमता व गुणवत्ता में कमी।
6. वस्तु का असुरक्षित होना।
7. वस्तु के दोषों को जानबूझकर छिपाना। जो उपभोग करने पर उजागर होते हैं।
8. वस्तुओं या माल का कृत्रिम अभाव पैदाकर, अधिक मूल्य अथवा घटिया माल ,खरीदने के लिए उपभोक्ता को मजबूर करना आदि।

(ब) सेवा :–

1. सेवा शर्तों के अनुसार समय पर गुणवत्ता युक्त संतोषजनक रूप से सेवा प्रदान नहीं करना।
2. सेवा का असुरक्षित व दोषयुक्त होना।
3. सुविधा / लाभ के स्थान पर हानि पहुँचाना।
4. शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक क्षति पहुँचाना आदि।

उपभोक्ता के अधिकार :–

उपभोक्ता संरक्षण का क्षेत्र माल विक्रय अधिनियम 1930 से शुरू माना जाता है, इसके बाद उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 पारित किया गया। इस अधिनियम का उद्देश्य उपभोक्ताओं के हितों की श्रेष्ठतर संरक्षण व्यवस्था करना है। अधिनियम 1986 की धारा 6 में उपभोक्ताओं के संरक्षण एवं संवर्धन करने के लिए निम्नलिखित अधिकारों का प्रावधान किया गया है –

1. परिसंकट मय माल के विरूद्ध संरक्षण का अधिकार :–

उपभोक्ताओं को उस माल के विपणन के विरूद्ध संरक्षण दिए जाने का अधिकार होता है, जो माल या सेवा उनके जीवन व सम्पत्ति के लिए संकट पैदा करते हैं। उदाहरण – अपमिश्रित खाद्य पदार्थ जीवन के लिए खतरनाक हैं और कमजोर सीमेन्ट सम्पत्ति व जीवन के लिए खतरनाक है।

2. सूचित किए जाने या सूचना का अधिकार :–

उपभोक्ता जो माल या वस्तु क्रय करता है, उसके गुण, मात्रा, शुद्धता मानक और मूल्यों के बारे में उत्पादक / विक्रेता से सूचना लेने का अधिकार है।

3. विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ या माल विभिन्न प्रतिस्पर्धी मूल्यों पर पाने का अधिकार :–

उपभोक्ताओं के लाभ के लिए सरकार और प्राधिकारियों द्वारा विभिन्न प्रकार के मालों या वस्तुओं की आपूर्ति विभिन्न प्रकार के मूल्यों पर बाजार में प्रस्तुत कराई जाये। ताकि उपभोक्ता अपनी पसन्द का माल क्रय कर सके और में एकाधिकार समाप्त हो सके।

4. उचित फोरमों के समक्ष ध्यान पाने का अधिकार :–

राष्ट्रीय परिषद् को उपभोक्ताओं को यह आश्वासन दिए जाने का उत्तरदायित्व दिया गया है, कि उन्हें उचित फोरमों के समक्ष सुनवाई का अधिकार होगा और ऐसे फोरमों से उपभोक्ता को ध्यान एवं विचार मिलेगा। उचित परितोष फोरमों द्वारा उसकी समस्या पर सम्यक विचार हो।

5. अनैतिक शोषण के विरूद्ध परितोष प्राप्त करने का अधिकार :–

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की धारा 36 में उपभोक्ताओं को अवरोध या अनुचित व्यापारिक व्यवहारों या अनैतिक शोषण के विरूद्ध परितोष प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है।

6. उपभोक्ता शिक्षा पाने का अधिकार :–

राष्ट्रीय उपभोक्ता परिषद को यह दायित्व दिया गया है, कि उपभोक्ताओं को संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत उनके उपचारों के प्रति उचित शिक्षा उपलब्ध कराए। एक बार लोगों को यदि उनके अधिकारों का बोध करा दिया जाए तो वे विनिर्माता और व्यापारियों के द्वारा शोषण के विरूद्ध अपने आपको शक्तिशाली महसूस कर सकते हैं।

उपभोक्ता के कर्त्तव्य –

उपभोक्ता को शोषण या हानि से बचने के लिए वस्तु (माल) या सेवा क्रय करते समय / भाड़े पर लेते समय अपने निम्नलिखित कर्तव्यों का पालन करना होगा–

1. क्रय की गई वस्तु / सेवा के मूल्यों के भुगतान की रसीद / कैश / बिल / क्रय की गई वस्तु / सेवा के मूल्यों के भुगतान की रसीद / कैश / बिल / क्रय संविदा आदि का विवरण आवश्यक रूप से प्राप्त करें।
2. वस्तु से सम्बंधित लिखित या अलिखित पूर्ण जानकारी प्राप्त करें।
3. वस्तुओं से श्रेणीकरण तथा गुणवत्ता के चिन्हों जैसे ISI/AG/ISO/FPO/ECO आदि पर पूरा ध्यान दें।
4. वस्तु व सेवा में कमी / दोष पाये जाने पर विक्रेता को तुरन्त सूचित कर हानि की क्षतिपूर्ति की मांग करें।
5. अपनी शिकायत की पुष्टि में दस्तावेज व प्रमाण जुटाऐं।
6. विनिर्माता या विक्रेता यदि उपभोता की शिकायत पर ध्यान नहीं देता है तो अविलम्ब उपभोक्ता न्यायालय / राज्य सरकार, उपभोक्ता संगठन / मंच से सम्पर्क स्थापित करें।

उपभोक्ता विवाद निवारण के लिए किये गए उपाय :–

उपभोक्ता विवादों के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व माल विक्रय अधिनियम 1930 बनाया गया था। 24 दिसम्बर 1986 को भारतीय संसद ने उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 पारित किया गया था। इसीलिए 24 दिसम्बर को भारत में उपभोक्ता दिवस के रूप में मनाया जाता है। इस अधिनियम में तीन स्तरों पर उपभोक्ता विवाद निवारण की व्यवस्था की गई है।

(1) राष्ट्रीय स्तर पर
(2) राज्य स्तर पर
(3) जिला स्तर पर।

राजस्थान स्तर पर :–

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 द्वारा प्रदत्त शक्तियों के आधार पर राजस्थान राज्य उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1987 पारित किया। इसके अनुसार दो स्तरीय व्यवस्था की गई है।

(1) राज्य स्तर

(2) जिला स्तर पर

राज्य आयोग :–

राजस्थान उपभोक्ता संरक्षण नियमावली 1987 के नियम 7 के अनुसार :–

1. राज्य आयोग का कार्यालय राज्य की राजधानी में स्थित होगा।
2. राज्य आयोग के कार्य दिवस तथा कार्यालय समय वहीं होंगे जो राज्य सरकार के हैं।
3. राज्य आयोग की शासकीय मुद्रा तथा सम्प्रतीक ऐसा होगा, जैसा राज्य सरकार विनिर्दिष्ट करें।
4. राज्य आयोग बैठक, जब कभी आवश्यक हो अध्यक्ष द्वारा बुलाई जायेगी।

जिला फोरम :–

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1987 के नियम 4 के अनुसार :–

1. जिला फोरम का कार्यालय जिला मुख्यालय पर स्थापित किया जायेगा।
2. जिला फोरम के कार्य दिवस तथा कार्यालय समय वहीं होंगे जो राज्य सरकार के हैं।
3. जिला फोरम की शासकीय मुद्रा तथा सम्प्रतीक ऐसा होगा जैसा राज्य सरकार विनिर्दिष्ट करें।
4. जिला फोरम की बैठक जब कभी आवश्यक हो, अध्यक्ष द्वारा बुलाई जायेगी।

उपभोक्ता विवाद निवारण के प्रावधान :–

1. वस्तु या सेवा का मूल्य तथा हर्जाने के लिए चाही गई राशि 20 (बीस) लाख रूप्ये से अधिक नहीं है तो प्रत्येक जिले पर स्थापित जिला फोरम/मंच में उपभोक्ता अपना वाद/शिकायत दर्ज करा सकता है।
2. वस्तु या सेवा का मूल्य तथा हर्जाने के रूप में चाही गई राशि 20 (बीस) लाख से अधिक और एक करोड़ रूपये तक है। तो ऐसे विवादों का निस्तारण कराने के लिए उपभोक्ता द्वारा राज्य आयोग में अपना वाद/शिकायत दर्ज करा सकता है।
3. वस्तु या सेवा का मूल्य एक करोड़ रूपये से अधिक है तो उपभोक्ता द्वारा अपना वाद/शिकायत राष्ट्रीय उपभोक्ता संरक्षण आयोग में वाद/शिकायत दर्ज करा सकता है।

वाद के निर्णय के विरूद्ध अपील करने के क्षेत्र –

(1) जिला फोरम द्वारा 90 दिन की अवधि में निर्णय नहीं देने या दिए गए निर्णय से उपभोक्ता के संतुष्ट नहीं होने पर वह जिला फोरम के निर्णय के विरूद्ध राज्य उपभोक्ता संरक्षण आयोग में अपील कर सकता है। अपील करने की अवधि 30 दिवस रहेगी। (2) राज्य आयोग के निर्णय के विरूद्ध राष्ट्रीय आयोग में अपील की जा सकती है। (3) राष्ट्रीय उपभोक्ता संरक्षण आयोग के निर्णय के विरूद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील करने का प्रावधान है।

विधिक जागरूकता

सर्वप्रथम फ्रान्स में गरीब, निर्धन तथा कंगाल लोगों की कानूनी सहायता के लिए कुछ कानून बनाए गए, तब सन् 1851 में विधिक सहायता आन्दोलन उजागर हुआ। ब्रिटेन में गरीब व जरूरत मन्दों को कानूनी सहायता के लिए कुछ नियम सन् 1944 में बनाए गए। न्याय के समान अवसर विषय पर भारत सरकार ने सन् 1960 में कुछ दिशा–निर्देश जारी किए। सन् 1980 में, राष्ट्रीय स्तर पर विधिक सेवा सहायता विषय पर नियम बनाने के लिए माननीय न्यायमूर्ति पी.एन. भगवती के निरीक्षण में एक कमेटी बनाई गई। विधिक सेवा सहायता कार्यक्रम को समस्त भारत में एकरूपता से लागू करने के लिए भारत सरकार ने सन 1987 में विधिक सेवा अधिनियम 1987 पारित किया। यह कानून सम्पूर्ण देश में 5 नवम्बर 1995 से प्रभावी हुआ। इसीलिए 5 नवम्बर को राष्ट्रीय विधिक सेवा दिवस मनाया जाता है।

विधिक सेवा अधिनियम 1987 के अधीन नागरिकों को समानता का अवसर देते हुए, तथा न्यायिक व्यवस्था को उन्नत करने एवं आर्थिक विषमता को कम करने के लिए अनेकों योजनाएँ लागू की गई हैं। गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले लोग, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति, आदिवासी, विकलांग, श्रमिक, वृद्धजन, महिलाओं, बालकों तथा अन्य कमजोर वर्गों के लोगों को लाभ देने के लिए केन्द्र सरकार व राज्य सरकारों ने कई जन कल्याणकारी योजनाऐं बना रखी हैं। दूरदराज गांवों–ढाणियों में रहने के कारण तथा अशिक्षा व अज्ञान के कारण वे लोग इन जनकल्याणकारी योजनाओं का लाभ नहीं ले पाते हैं। साथ ही नियमों, कानूनों की अनविज्ञता के कारण आपराधिक कृत्य भी कर देते हैं।

विधिक सेवा प्राधिकरण के संस्थान :–

1. राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण
2. राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण
3. जिला विधिक सेवा प्राधिकरण
4. तहसील विधिक सेवा समितियाँ

विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम 1987 के तहत गठित सेवा संस्थानों द्वारा जनकल्याणकारी योजनाओं एवं संशोधित नियम कानूनों की जानकारी समाज के सभी नागरिकों तथा पहुँचाने का कार्य विधिक जागरूकता कहलाती है।

राजस्थान राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण :–

राजस्थान में, राजस्थान राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण की स्थापना अधिनियम 1987 के अधीन की गई है। जिसका मुख्यालय राजस्थान उच्च न्यायालय भवन जयपुर में स्थित है। माननीय मुख्य न्यायाधीश महोदय, राजस्थान उच्च न्यायालय इसके मुख्य संरक्षक एव वरिष्ठ न्यायाधीश इसके कार्यकारी अध्यक्ष होते हैं। जिनके निर्देश में पूरे राज्य में विधिक सेवा कार्यक्रमों का संचालन होता है।

राजस्थान राज्य प्राधिकरण के कृत्य :–

1. राज्य प्राधिकरण का यह कृत्य होगा कि वह केन्द्रीय सरकार की नीति और निर्देशों को कार्यान्वित करें।
2. ऐसे व्यक्तियों को विधिक सेवा देना, जो इस अधिनियम के अधीन मानदण्डों की पूर्ति करते हैं।
3. लोक अदालतों का, जिनके अन्तर्गत न्यायालय के मामलों के लिए लोक अदालतें भी हैं, संचालन करना।
4. निवारक और अनुकलन विधिक सहायता कार्यक्रमों का जिम्मा लेना।
5. स्थाई लोक अदालतों का संचालन।
6. वैकल्पिक विवाद निराकरण व्यवस्था।
7. विधिक चेतना का प्रचार एवं प्रसार करना।
8. ऐसे कृत्यों का पालन करना जो केन्द्रीय प्राधिकरण द्वारा निर्देशित किये जावें।

राजस्थान राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण द्वारा दो पैनल अधिवक्ता व दो पैरा लीगल वालिन्टियर्स की विधिक जागरूकता टीमें गठित की गई हैं।

विधिक जागरूकता करने के उपाय :–

1. न्यायिक अधिकाकारीगण व विधिक जागरूकता टीम द्वारा, विद्यालय, महाविद्यालय एवं सार्वजनिक स्थानों पर विधिक साक्षरता शिविरों का आयोजन किया जाता है।

2. 8 मोबाइल वेनों के माध्यम से गांव–गांव में सचल लोक अदालत एवं विधिक जागरूकता अभियान चलाया जाता है।

3. आकाशवाणी, दूरदर्शन व कम्यूनिटीरेडियो पर नियमित "कानून की बात" साप्ताहिक कार्यक्रम का प्रसारण किया जाता है। दूरदर्शन राजस्थान पर प्रत्येक शनिवार को सांय 7:00 बजे से 7:30 बजे तक एवं राजस्थान के सभी आकाशवाणी केन्द्रों पर प्रत्येक रविवार को सांय 5:45 बजे से 6:00 बजे तक "कानून की बात" का विधिक जागरूकता हेतु जनहित में प्रसारण किया जा रहा है।

4. जिला विधिक सेवा प्राधिकरण द्वारा पर्चे व लघु–पुस्तिकाऐं छपवाकर वितरित करवाई जाती हैं।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें

(राजस्थान) राज्य स्तर पर –

श्रीमान सदस्य सचिव, राजस्थान,
राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण, जयपुर
टेलीफोन नम्बर–0141–2227481
फैक्स नं.– 0141–2227602
हैल्पलाइन नम्बर– 0141–2385877

जिलास्तर पर – अध्यक्ष/सचिव, जिला विधिक प्राधिकरण

तहसील स्तर पर– अध्यक्ष–तहसील विधिक सेवा समिति

प्रमुख लाभकारी नियम व योजनाएँ –

राजस्थान राज्य सरकार द्वारा निम्नलिखित योजनाऐं चलाई जा रही हैं।

1. दुर्घटना मृत्यु पर सहायता –

असंगठित क्षेत्र के पंजीकृत श्रमिक की दुर्घटना में मृत्यु होने पर 5 लाख रूपये की सहायता दी जाती है।

2. चिकित्सा अनुदान राशि योजना –

पंजीकृत श्रमिकों को इलाज कराने के लिए एक लाख रूपये की राशि सहायता दी जाती है।

3. निर्माण श्रमिकों के बच्चों को छात्रवृति –

पंजीकृत श्रमिकों के कक्षा 6 से 8 तक छात्र को 1000/– रु. व छात्रा को 1500/– रु. छात्रवृत्ति राशि, कक्षा 9 से 12 तक छात्र को 2000/– रु. छात्रा को 2400/– रु. छात्रवृत्ति, स्नातक स्तर पर छात्र को 4000/– रु. छात्रा को 5000/– रु. तथा स्नातकोत्तर स्तर पर छात्र को 6000/– रु. छात्रा को 8000/– रु. छात्रवृत्ति देने की योजना लागू की गई है।

4. प्रसूति सहायता योजना :–

महिला हितकारी योजना में दो प्रसव के लिए प्रति प्रसव 6000/– रु. प्रसूति सहायता दी जा रही है।

5. राजस्थान विश्वकर्मा गैर संगठित कामगार अंशदायी योजना–

पंजीकृत श्रमिकों के जीवन सुरक्षा के लिए अंशदायी पेन्शन लाभ दिया जाता है।

6. मातृत्व लाभ अधिनियम 1961 –

पंजीकृत महिला श्रमिकों को बच्चे के जन्म से पूर्व 6 साप्ताह और जन्म के बाद 6 सप्ताह का मजदूरी सहित अवकाश पाने का अधिकार है।

7. कर्मचारियों की सुरक्षा के लिए राज्य बीमा व कर्मचारी भविष्य निधि योजना चलाई जा रही है।

8. बाल विवाह प्रतिषेध अधिनियम 2006–

21 वर्ष से कम आयु का लड़का तथा 18 वर्ष से कम आयु की लड़की की शादी बाल विवाह कहलाता है यह दण्डनीय अपराध है नियमानुसार बाल विवाह करने पर माँ व बाप को दो साल तक की कड़ी सजा या एक लाख रुपये जुर्माना या दोनों सजाएँ हो सकती हैं।

9. नकल विरोधी कानून –

राजस्थान सार्वजनिक परीक्षा (अनुचित साधनों पर रोक) अधिनियम 1992 के अनुसार परीक्षाओं के दौरान नकल एवं अनुचित साधनों के प्रयोग करने पर तीन साल तक की सजा का प्रावधान किया गया है नकल करने वाले छात्र के विरूद्ध आपराधिक प्रकरण दर्ज किया जाता है और उसे स्कूल से निष्कासित कर दिया जाता है।

सूचना का अधिकार

भारत के संविधान ने हर नागरिक को बोलने की स्वतंत्रता दे रखी है। जनता टैक्स देती है, इसलिए जनता को यह जानने का अधिकार है कि उसके द्वारा चुकाई गई रकम सही कामों पर खर्च हुई या नहीं?कामों की गुणवत्ता कैसी है?सरकार की जनता के प्रति पूरी जबावदेही है या नहीं? किसी भी नागरिक द्वारा मांगने पर सरकारी अधिकारी/कर्मचारी द्वारा सूचना देनी होगी। सूचना/जानकारी लेना नागरिकों का अधिकार है, यही सूचना का अधिकार है।

सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 :–

लोकसभा द्वारा यह कानून 15 जून 2005 को पारित हुआ था राष्ट्रपति की मंजूरी के बाद यह कानून पूरे देश में 13 अक्टूबर 2005 से लागू हो चुका है। सूचना के अधिकार अधिनियम 2005 के तहत देश के नागरिकों को निम्नलिखित अधिकार दिए गए हैं :–

1. हर नागरिक को यह अधिकार है कि राज्य सरकार और केन्द्र सरकार के किसी भी विभाग अथवा कार्यालय से वह सूचना प्राप्त कर सकता है।
2. कोई भी नागरिक दस्तावेज या रिकार्ड देख सकता है और दस्तावेजों की प्रमाणित प्रतियाँ ले सकता है।
3. कामों को भी देख सकेगा।
4. काम में आने वाली सामग्री के नमूने ले सकेगा।
5. कम्प्यूटर, सी.डी. या फ्लोपी में भी सूचना ले सकेगा।
6. मजदूरी के मस्ट्रोल, लॉग बुक टेण्डर के दस्तावेज, कैश बुक विभाग की योजनाएँ आदि की जानकारी लेने का अधिकार है।

सूचना प्राप्त करने का तरीका :–

कोई भी नागरिक जो सूचना लेना चाहता है उसे निर्धारित प्रपत्र पर आवेदन पत्र देना होगा। आवेदन पत्र के साथ 10/– रु. नकद या पोस्टल ऑर्डर के रूप में जमा कराने होंगे।

1. अगर सूचना बड़े आकार के कागज की नकल की है तो अलग राशि देनी होगी।
2. सी.डी. या फ्लॉपी के लिए 50/– रु. जमा कराने होंगे।
3. फोटोकापी 2/– रु. प्रति पृष्ठ की दर से देने होंगे।
4. रिकार्ड या दस्तावेज देखने के लिए 10/– रु. जमा कराने के बाद एक घण्टा निःशुल्क रिकार्ड देख सकते हैं, उसके बाद हर 15 मिनट या उससे कम समय के लिए 5/– रु. देने होंगे।
5. आवेदन के 30 दिवस के अन्दर सूचना प्राप्त कर सकेगा
6. व्यक्ति के जीवन या स्वतंत्रता के बारे में 48 घण्टे में सूचना प्राप्त कर सकेगा।
7. सहायक सूचना अधिकारी 35 दिन में सूचना मंगवाकर देगा।
8. समय अवधि के अन्दर सूचना न मिलने पर सूचना देने से इंकार माना जायेगा।

सूचना नहीं देने पर जुर्माना अथवा पैनल्टी सूचना :–

सूचना देने वाला अधिकारी बिना किसी सही कारण के आवेदन लेने से मना करे, जानबूझकर गलत या अधूरी या भ्रामक सूचना दे, तो 250/– रु. रोजाना कुल 25000/– रु. तक के जुर्माने का प्रावधान है।

सूचना आयोग लोक सूचना अधिकारी के विरूद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही की सिफारिश भी कर सकता है।

कौन सी सूचना नहीं मिल सकती हैं :–

1. राज्य की सुरक्षा सम्बंधी सूचना।
2. सुरक्षा रणनीति, विज्ञान एवं आर्थिक मामलों की गोपनीय जानकारी।
3. विदेशों से प्राप्त गोपनीय सूचनाएँ।
4. जिससे न्यायालय, संसद या विधानसभा के अधिकार का हनन हो।
5. गुप्तचर ब्यूरो, सीमा सुरक्षा बल, अपराध या जिससे सुरक्षा को खतरा हो।

सूचना अधिकारी :–

1. ग्राम पंचायत में – सचिव या ग्राम सेवक
2. पंचायत समिति में – विकास अधिकारी
3. जिला परिषद में – मुख्य कार्यकारी अधिकारी
4. नगर पालिका में – अधिशाषी अधिकारी
5. राज्य सरकार द्वारा सहायता प्राप्त संस्था में– मुख्य कार्यकारी अधिकारी

6. विश्वविद्यालय में – कुल सचिव
7. सरकारी विभाग में विभागाध्यक्ष के अधीन वरिष्ठतम अधिकारी
8. शासन सचिवालय में – सचिव प्रशासन सुधार विभाग

अपील का समय :–

लोक सूचना अधिकारी से सूचना मिलने के 30 दिन के अन्दर उच्च अधिकारी के समक्ष प्रथम अपील की जा सकती है।

अपील अधिकारी :–

ग्राम सेवक की अपील सरपंच को, विकास अधिकारी की अपील प्रधान को, अतिरिक्त कलेक्टर की अपील–जिला कलेक्टर को, प्रथम अपील की जा सकती है। 30 दिन में सुनवाई नहीं होने पर दूसरी अपील राज्य सूचना आयोग को करनी होगी।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. किसी वस्तु या सेवा का प्रतिफल चुका कर उसे प्राप्त कर अन्तिम उपयोग कर्ता उपभोक्ता कहा जाता है।
2. वस्तु या सेवा क्रय करते समय या भाड़े पर लेते समय उसकी गुणवत्ता, मात्रा शुद्धता उपयोगिता तथा मानक पर ध्यान देना चाहिए।
3. मात्रा, माप, शुद्धता में कमी होने पर तथा निर्धारित मूल्य से अधिक मूल्य मांगने वाले की तुरन्त शिकायत करें।
4. उपभोक्ता अपने अधिकारों व कर्त्तव्यों के प्रति सजग रहे।
5. सरकार द्वारा संचालित कल्याणकारी व लाभकारी योजनाओं की जानकारी रखना विधिक जागरूकता है।
6. सूचना का अधिकार 2005 देश के प्रत्येक नागरिक को अधिकार देता है कि वह केन्द्र या राज्य सरकार के किसी भी विभाग या कार्यालय से सूचना प्राप्त कर सकता है या रिकार्ड देख सकता है।
7. 30 दिवस के अन्दर सूचना नहीं मिलने या सही सूचना नहीं होने, सूचना प्राप्तकर्ता द्वारा उच्च अधिकारियों से शिकायत की जा सकती है।
8. नागरिक को सूचना के विरूद्ध अपील करने का अधिकार है।

अभ्यास प्रश्न

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. उपभोक्ता वस्तु या सेवा किस प्रकार प्राप्त करता है?
2. वस्तुओं के आदान प्रदान की आवश्यकता क्यों हुई?
3. व्यक्ति किसे कहा गया है?
4. विधिक जागरूकता में कौनसी योजनाओं की जानकारी की जाती है?
5. विधिक सेवा प्राधिकरण के कितने स्तर हैं?
6. 'कानून की बात' किस दिन और कितने बजे प्रसारित होता है?
7. सूचना का अधिकार कानून देश में लागू कब हुआ था?
8. 30 दिवस के अन्दर सूचना नहीं मिलने पर क्या करना चाहिए?

निबन्धात्मक प्रश्न –

1. उपभोक्ता अधिनियम 1986 के अनुसार उपभोक्ता कौन है?
2. उपभोक्ता शोषण किस प्रकार रोका जा सकता है?
3. विधिक जागरूकता किसे कहा जाता है?
4. सरकार ने विधिक जागरूकता के कौनसे उपाय किए हैं?
5. नकल रोकने का कानून क्या है?
6. सूचना का अधिकार 2005 द्वारा नागरिकों को कौन से अधिकार दिए गए हैं?
7. सूचना किस प्रकार प्राप्त की जाती है?
8. सूचना अधिकारियों का प्रावधान किस प्रकार किया गया है?

अध्याय 19

सड़क सुरक्षा–शिक्षा

विषय भूगोल

पाठ परिवहन एवं संचार व्यवस्था

उद्देश्य : यात्रा के साधनों को प्रभावित करने वाले कारकों का विश्लेषण करना

विषय वस्तु :

"बस रैपिड ट्रांजिट कॉरिडार" (B.R.T.) एक ज्वलंत विवाद का विषय बन चुका है।

इस व्यवस्था से सार्वजनिक परिवहन का उपयोग करने वालों की यात्रा के समय को कम करने के उद्देश्य की पूर्ति होती है।

निम्नलिखित सुझावों की क्रियान्वति से सार्वजनिक परिवहन के अधिकाधिक उपयोग को प्रोत्साहित किया जा सकता है–

(अ) सार्वजनिक परिवहन का अधिकाधिक उपयोग को विचित्र उत्प्रेरक योजनाओं के माध्यम से प्रोत्साहित एवं अभिप्रेरित किया जाए।

B.R.T. गलियारा

सार्वजनिक परिवहन सेवा

(ब) छोटी एवं मध्यम श्रेणी की कारों के अलावा, प्रत्येक वाहन के लिये "बस लेन ही उपयोग करना अनिवार्य हो, ताकि कार लेन में होने वाली भीड़ की समस्या को कम किया जा सके। क्योंकि बस लेन द्वारा काफी स्थान घेर लिया जाता है जबकि दिन में अधिकतर समय यह खाली रहती है।

(स) दुपहिया और तीन पहिया वाहनों द्वारा दुपहिया लेन का ही सख्ती से उपयोग किया जाए।

(द) पैदल चलने वालों द्वारा सड़क पार करना सुविधा जनक बनाने के लिये थोड़ी–थोड़ी दूरी पर 'फुट ओवरब्रिज' का निर्माण कराया जाए।

(य) सड़क, दुर्घटनाओं को कम करने के लिए सड़कों पर परिवहन की सर्वाधिक व्यस्तता के समय प्रत्येक दिशा के आबादी का घनत्व का भलीभाँति, अध्ययन करके, प्रत्येक यातायात सिगनल पर समय निर्धारित किया जाये।

पदयात्री पुलिया

गतिविधि :

सार्वजनिक यातायात के उपयोग के लिए प्रोत्साहित करने हेतु नारा (स्लोगन) लेखन और पोस्टर बनाने की प्रतियोगिता का आयोजन करें।

अभ्यास :

देहली में B.R.T. कॉरीडोर के सही क्षेत्र का पता लगाएँ और भारत के अन्य कस्बों या शहरों में इसके और अधिक सीमा तक विस्तार के बारे में सामान्य परिचर्चा का संचालन करें।

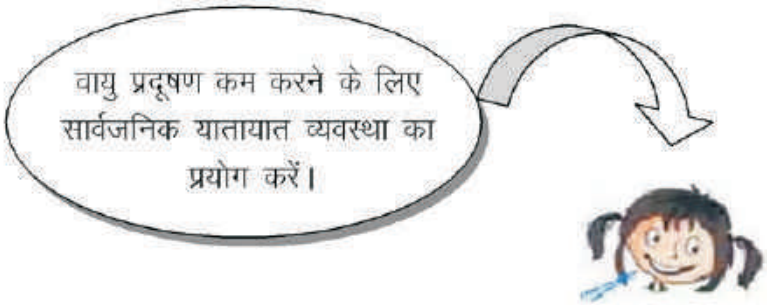

विषय अर्थशास्त्र

पाठ विकास

उद्देश्य : सड़क पर वयोवृद्ध, विशेष योग्यजन और युवाओं की खास आवश्यकताओं को समझना।

विषय–वस्तु : (अ) कस्बों एवं शहरों में बुनयादी संरचना का विकास समाज के प्रत्येक वर्ग की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए उचित व्यावहारिक योजना के बाद किया जाना चाहिए। उदाहरण स्वरूप, सभी सड़कों, पगडंडियों, रेलवे स्टेशन और सार्वजनिक स्थानों पर विशेष योग्यजन की आवश्यकतानुसार 'रैम्प सुविधा उनकी सुविधा और सुरक्षा को निश्चित करते हुए बनाने चाहिए । (ब) यात्रियों के चलने फिरने को सरल एवं सुसाध्य बनाने एवं उनके सामान की सुविधा पूर्वक लाने ले जाने के लिए प्रत्येक अंतरराज्यीय बस टर्मिनल, हवाई अड्डों पर पहुंचने की सड़कों, रेलवे स्टेशन आदि पर "रैम्प" व चलती सीढ़ी की सुविधा होनी चाहिए ताकि ऐसे स्थानों पर 'फुट ब्रिज' के ढह जाने अथवा भगदड़ मचने की घटनाओं आदि को कम किया जा सके।

शारीरिक रूप से असहाय व्यक्ति रैम्प के सहारे बस में चढ़ते हुए

विकास व्यक्ति को ज्यादा आर्थिक संसाधन के साथ सशक्त करता है जो व्यक्ति को सामाजिक गतिशीलता एवं आर्थिक सम्पन्नता की ओर ले जाती है। इसके फलस्वरूप शहर की सड़कों पर कारों की संख्या, कार चालकों का अविवेक पूर्ण व्यवहार, अत्यधिक नाबालिगों द्वारा कार चलाने से घातक दुर्घटनाएँ, नशा करके गाड़ी चलाने आदि की संख्या बढ़ी है। ऐसे खतरों के मामले केवल सख्त सजा से ही समाप्त किये जा सकते हैं, जो ऐसे वर्ग के लिये एक उदाहण बन सकें।

अभ्यास :

अपने आप को ऐसी परिस्थिति में रखकर सोचें कि आप को अपने परिवार के किसी वयोवृद्ध सदस्य अथवा विशेष योग्यजन के साथ साधारण यातायात व्यवस्था से आम स्थान जैसे – बैंक, पोस्ट ऑफिस, अस्पताल, हवाई अड्डा, रेलवे स्टेशन आदि पर जाना पड़ सकता है। आप कौन–कौन सी अड़चनों (बाधाओं) का सामना करेंगे और अकस्मात् सामने आने वाली समस्याओं का कैसे समाधान निकालेंगे ?

गतिविधि :

"वयोवृद्ध या विशेष योग्यजन का सड़क पर अधिकार" विषय पर एक सार्वजनिक सूचना का अभियान आयोजित करें।

"टक्कर मारकर भागने का प्रकरण :
सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पेरेरा की सजा का समर्थन

CNN-/BN/12 January 11.25 AM.

नई दिल्ली – बृहस्पतिवार के दिन सर्वोच्च न्यायालय ने एलीस्टेअर एन्थनी पेरेरा के टक्कर मारकर भागने के प्रकरण में उसे दोषी ठहराये जाते हुए फैसले को यथावत् रखा जिसमें मुंबई में छह साल पहले सात व्यक्ति मारे गये थे। सर्वोच्च न्यायालय ने परेरा की जमानत की अनुमति भी रद्द कर दी और बाम्बे उच्च न्यायालय द्वारा दी गई तीन वर्ष की जेल की सजा भुगतने का आदेश दिया।

R.M. Lodha की अध्यक्षता में सर्वोच्च न्यायालय की बैंच ने उसकी जमानत रद्द कर दी और जेल में शेष अवधि गुजारने के आदेश दिए। न्यायालय ने परेरा द्वारा भेजी गई विशेष अवकाश याचिका, जिसमें बाम्बे उच्च न्यायालय द्वारा उसे दोषी ठहराये जाने के फैसले को चुनौती दी थी, पर निर्णय दिया। धारा 304 के अन्तर्गत तीन वर्ष की सख्त कैद, धारा 333 के अन्तर्गत एक वर्ष और छः माह की कैद, भयंकर चोट पहुंचाने के लिए परेरा को सजा दी गई। फैसला देते समय न्यायालय ने व्यक्त किया कि सभी सजाएँ साथ–साथ चलेंगी।

वर्ष 2006 में 21 वर्षीय परेरा ने बान्द्रा में सड़क की पगडंडी पर सोए हुए पन्द्रह लोगों पर अपनी 'टोयोटो करोला' कार चढ़ाकर कुचल दिया था। वह उस समय नशे में पाया गया था। सात श्रमिक मारे गए थे व अन्य कई घायल हो गए थे। 'सेशन कोर्ट ने बिना दण्ड दिए परेरा को उदारता से छोड़ दिया, बाद में बाम्बे उच्च न्यायालय ने 'सेशन कोर्ट' के फैसले के सार्वजनिक विरोध से इस मुकदमे को फिर से खोला।

राज्य सरकार ने भी सख्त सजा की मांग करते हुए पुनः परीक्षण प्रार्थना पत्र दिया।

विषय नागरिक शास्त्र

पाठ प्रजातन्त्र के प्रभाव

उद्देश्य : 1. छात्रों को लोकतांत्रिक आवश्यकताओं से अवगत कराना और उन्हें सड़क पर विनम्र और सही उपयोगकर्ता बनाना।

2. उनको जीवन के महत्त्व के बारे में समझाना

विषय–वस्तु :

लोकतन्त्र के परिमाण का सबसे महत्त्वपूर्ण मापदण्ड नागरिक का 'जीने का अधिकार' है।

सड़क दुर्घटनाओं एवं सड़क हिंसा की बढ़ती हुई दुर्घटना/घटनाओं से 'जीने का अधिकार' का उल्लंघन होता हैं एवं प्रजातंत्र के आधारभूत प्रभाव को कम करने के कारणों में से एक है। इस प्रकार से भावी नागरिकों को यातायात के नियमों एवं सड़क सुरक्षा के बारे में जानकारी देना हमारी जिम्मेदारी हो जाती है। निम्नलिखित गतिविधियाँ व अभ्यास कार्य आपको हमारे, जीवन में सड़क सुरक्षा की महत्ता को महसूस कराएँगी।

चालकों के नशे में वाहन चलाने पर हर वर्ष लोग हादसे के शिकार होते हैं।

मोबाइल फोन, तेज स्वर का संगीत, कार में बच्चों का शोर मचाना आदि चालक को वाहन चलाने में व्यवधान डालते हैं।

सड़क पर क्रोधोन्माद, भारत में सड़क दुर्घटना का एक प्रमुख कारण है।

अभ्यास :

1. मौसम की दशा या शराब का प्रभाव कहाँ तक सड़क हिंसा या क्रोधोन्माद पैदा करते हैं ?
2. क्या बाँई तरफ 'यू टर्न' लेने की अनुमति है ?
3. 'बस लेन' का क्या तात्पर्य है और इन्हें अलग क्यों किया जाता है ?

गतिविधि :

(i) निम्न पर विचार विमर्श और सामान्य चर्चा कीजिए –

(अ) आज के यातायात घटनाक्रम (या व्यवस्था) में नागरिकों का सम्मान व अधिकार अत्यन्त आवश्यक है।

(ब) सड़क क्रोधोन्माद मृत्युकारक है।

(ii) पैदल चलने वालों व वाहन चालकों को पृथक् पृथक् रखते हुए यातायात के लिए प्रयुक्त भू क्षेत्र की गतिविधि का आयोजन अपने सहपाठियों के साथ करें। जैसे – 'जीब्रा क्रासिंग', बस लेन, 'यू टर्न', आदि। इस पर रिपोर्ट तैयार करें।

(iii) समाचारपत्र की कतरनों (Clippings) की मदद से कार्य योजना की फाईल (Project File) तैयार करें, जो हाल ही के 'केसेज' से सम्बधित हो, जिसमें जीने का अधिकार व स्वतंत्रता के लिए खतरे की आशंका हो, सड़क क्रोधोन्माद कम करने के तरीके बताइये।

अध्याय–20

स्वच्छता एवं ठोस कचरा प्रबन्धन

स्वच्छता

मानव जीवन मूल्यों में एक मूल्य स्वच्छ रहना भी शामिल है। स्वच्छ (शौच) तो भारतीय संस्कृति है। भारतीय दर्शन में शरीर, आत्मा, मन बुद्धि तथा पर्यावरण का शुद्ध रखना मानव जीवन का महत्वपूर्ण कार्य बताया गया है। प्राचीन शिक्षा पद्धति में यज्ञोपवीत संस्कार के बाद शिष्य को स्वच्छ रहने की शिक्षा दी जाती थी।

बीमारी फैलाने वाले कचरे (गन्दगी) में पारिवारिक व कारखानों का दूषित जल, मानव व पशुओं का ठोस कचरा तथा कृषि सम्बंधी कचरे शामिल हैं। इन सभी प्रकार के कचरे का निस्तारण कार्य स्वच्छता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने स्वच्छता को कई प्रकार से परिभाषित किया है, जैसे :–

1. लोगों को स्वच्छता के लिए शौचालयों व दूषित पानी को स्वयं स्वच्छ रखने के साधनों व उपायों को करने की आवश्यकता है।
2. स्वच्छता का सामान्य आशय उन प्रावधानों, सुविधाओं और सेवाओं से है जो मानव से मल–मूत्र और कचरे आदि का सुरक्षित निस्तारण करते हैं।
3. बहुत से व्यवसायी लोग इस बात पर सहमत हैं कि स्वच्छता पूर्ण रूप में एक बड़ा विचार है, इसमें निम्नलिखित बातें शामिल हैं :–

(1) मानव के मल–मूत्र, कचरे आदि का सुरक्षित संग्रहण, भण्डारण, उपचार निस्तारण तथा पुनः प्रयोग।
(2) ठोस कचरे का पुनः प्रयोग और पुनः चक्रण का प्रबन्धन।
(3) पारिवारिक दूषित जल की निकासी और निस्तारण और पुनः प्रयोग / पुनः चक्रण के उपाय।
(4) तूफान के पानी की निकासी व्यवस्था।
(5) औद्योगिक कचरे का संग्रहण व निस्तारण प्रबन्धन।
(6) खतरनाक कचरा जैसे– रासायनिक कचरा, रेडियोएक्टिव कचरा और अस्पतालों का कचरा आदि का संग्रहण व निस्तारण प्रबन्धन।

स्वच्छता पर धान क्यों?:–

गन्दगी या कचरे का पैदा होना, घनी आबादी क्षेत्रों के लिए कष्टदायी होती जा रही है। विशेष रूप से कमजोर समूहों के बच्चे, जवान और वृद्ध बीमारियों से दुःख पा रहे हैं। जिनकी प्रतिरोधी क्षमता कमजोर है। पर्यावरण को दूषित करने का एक कारण कचरे का खराब नियंत्रण भी है। बहुत से लोगों पर अपनी गन्दगी और कचरे निस्तारण के अभी भी पर्याप्त साधन नहीं है।

अनउपचारित दूषित जल और अतिरिक्त कचरा पर्यावरण में मानव स्वास्थ्य को कई तरह से दुष्प्रभावित करता है। जैसे :–

1. पीने का पानी का दूषित होना।
2. खाद्य श्रृंखला का दूषित होना, उदाहरण फल–सब्जी, मछली आदि का दूषित होना।
3. नहाने व मनोरंजन से जल दूषित होना।
4. मक्खियों एवं अन्य कीटों का बढ़ना जो बीमारी फैलाते हैं।

मानव जब कभी भी अपनी गन्दगी नष्ट करता है तभी स्वच्छता और स्वास्थ्य में प्रगति होती है और अच्छी तरह स्वास्थ्य में सुधार होता है।

स्वच्छता के प्रकार (Types of Sanitation) :–

1. **सामुदायिक स्वच्छता (Community Led Total Sanitation [CLTS])** :– सामुदायिक स्वच्छता (CLTS) का सम्बंध ग्रामीण लोगों की सहज और लापरवाही पूर्ण तरीके से खुले में मल त्याग प्रक्रिया से है। सामुदायिक स्वच्छता के माध्यम से ग्रामीण लोगों को खुले में मल त्यागने से रोकने के लिए अनुदानित सुविधाओं से परिचित कराना है।
2. **शुष्क स्वच्छता (Dry Sanitation)** :– शुष्क स्वच्छता से तात्पर्य शुष्क शौचालय, पैशाबघर आदि अतिरिक्त प्रयासों से है। केवल हाथ धोना ही इसका उददेश्य नहीं है।
3. **पारिस्थितिक स्वच्छता (Ecological Sanitation)** :– पारिस्थितिक स्वच्छता सामान्य रूप से सुरक्षित कृषि उपायों और स्वच्छता के गहन सम्बंध है। दूसरे शब्दों में पारिस्थितिक व्यवस्थाऐं अतिरिक्त संसाधनों के सुरक्षित पुनः चक्रण से है। इसमें पौष्टिक आहार और जैविक फसलों की पैदावार में अनवीनकरण संसाधनों के प्रयोग को कम करना है।
4. **पर्यावरणीय स्वच्छता (Environmental Sanitation)** :– बीमारियों से सम्बंधित पर्यावरण के कारकों का नियंत्रण पर्यावरणीय

स्वच्छता के घेरे में आता है। ठोस कचरा प्रबन्धन, पानी और दूषित जल का उपचार, औद्योगिक कचरा उपचार और ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण इस श्रेणी के लघु अंग हैं।

5. **सुधरी और बिना सुधरी स्वच्छता (Inmproved and Unimbroved Sanitation)** :– इसका सम्बंध हजारों वर्ष पुरानी गृह स्तर पर मानव के मल–मूत्र त्याग नियंत्रण से है इसके अन्तर्गत स्वच्छता और पानी आपूर्ति की देखभाल की जाती है।

6. **स्वच्छता का अभाव** :– इसका सम्बंध सामान्य रूप से शौचालय के अभाव से है जिनका प्रयोग व्यक्ति स्वेच्छापूर्वक करता है। स्वच्छता अभाव सामान्यतः खुले में मल–मूत्र त्याग और जन स्वास्थ्य विषय से गम्भीर सम्बंध रखता है।

7. **पुष्टिकारक स्वच्छता (Sustainable Sanitation)** :– पुष्टिकारक स्वच्छता का क्षेत्र सम्पूर्ण स्वच्छता मूल्य श्रंखला है। जिसमें उपभोक्ता के अनुभव पर विष्ठा, मल–मूत्र और दूषित जल के परिवहन, उपचार, पुनः उपयोग या निस्तारण के तरीके शामिल हैं। जिनसे पर्यावरण और प्रकृति संसाधनों की सुरक्षा होती है।

स्वच्छ भारत मिशन (S.B.M.G.) :– ग्रामीण स्वच्छता यद्यपि राज्य सरकार का विषय है, किन्तु केन्द्र सरकार ने राज्य के प्रयासों को सहयोग देने के उद्देश्य से 1986 में केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम लागू किया। 01 अप्रैल 1999 से इस कार्यक्रम में संशोधन कर इसे पूर्ण स्वच्छता अभियान (TSC) संज्ञा से अभिहित किया गया। इसके बाद इसका नामकरण निर्मल भारत अभियान कर दिया गया है। इसका उददेश्य सामुदायिक संतुष्टि दृष्टिकोण अपना कर ग्रामीण भारत को निर्मल भारत में परिवर्तित करना और 2022 तक सभी ग्रामीण परिवारों को 100 प्रतिशत स्वच्छ करना था।

02 अक्टूबर 2014 को इसे नया नाम "स्वच्छ भारत मिशन" (ग्रामीण) दिया गया है। इसका लक्ष्य सभी ग्रामीण परिवारों को शौचालय की सुविधा प्रदान करके और स्वच्छता को बढ़ावा देने के लिए सभी ग्राम पंचायतों में ठोस और द्रवित अपशिष्ट प्रबंध क्रियाकलापों के माध्यम से 02 अक्टूबर 2019 तक खुले में शौच मुक्त भारत हासिल करना है। स्वच्छ भारत मिशन (ग्रामीण) में प्रत्येक परिवार शौचालय के लिए प्रोत्साहन राशि 10000/– रू. से बढ़ाकर 12000/– रू. कर दी गई है।

शहरी अबसंरचना, आवास और स्वच्छता :–

देश में अच्छी शहरी अबसंरचना, आवास और स्वच्छता प्रदान करने के लिए केन्द्र सरकार विभिन्न केन्द्र प्रायोजित योजनाओं के द्वारा राज्य सरकारों को संसाधन आवंटित कर रही है तथा देश में राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों के माध्यम से धन उपलब्ध करा रही है। इस क्षेत्र में की गई कुछ प्रमुख योजनाऐं पहले से चलायी जा रही है, उनमें से कुछ प्रमुख योजनाएँ निम्नलिखित हैं :–

(1) **जवाहरलाल नेहरू शहरी नवीनीकरण मिशन (JNNURM-2005)** :– इस कार्यक्रम के अन्तर्गत शहरी गरीबों को आवास के विकास और क्षमता विकास के लिए सहायता देना।

(2) **शहरी निर्धनों को बुनियादी सेवाऐं कार्यक्रम (BSUP)** :– यह कार्यक्रम शहरों में आवास और गन्दी बस्ती उन्नयन के कार्यक्रम आयोजित कर रहा है।

(3) **राजीव आवास योजना** :– शहरों में स्लम वासियों को सम्पत्ति का अधिकार प्रदान करने का कार्यकम चलाया जा रहा है।

स्वच्छता प्रबन्धन के मापदण्ड :–

1. प्रतिष्ठान प्रबन्धक को प्रदूषण के स्त्रोतों से दूरी बनाकर रखनी चाहिए, प्रदूषण स्त्रोतों में घरेलू जानवर, दूषित पानी, रासायनिक पदार्थ और अन्य प्रदूषक पदार्थ शामिल हैं।
2. प्रबन्धक को चाहिए कि खराब बदबू, हानिकारक गैसों, तेज गन्ध युक्त धुँआ और भाप की निकासी लिए अच्छे रोशनदान या निकास यंत्र लगाए।
3. कार्य स्थल को गन्दगी से अच्छी तरह अलग रखा जाय। दीवारें फर्श और छत को गन्दा न होने दिया जाये।
4. कच्चे माल का प्रोसेसिंग रूम, उत्पादन प्रक्रिया रूम और पैकिंग रूम अलग–अलग होने चाहिए।
5. गन्दे पानी को शुद्ध करने व अन्य गन्दगी व्यवस्था को रोकने के संयंत्र लगाने चाहिए।
6. फर्श, दीवार छत को वाटर प्रूफ पदार्थों से साफ करना चाहिए।
7. प्रवेश द्वार खिड़की रोशनदान और नालियों पर, चूहों, धूल व हानिकारक जीवणुओं को रोकने के उपकरण लगाने चाहिए।
8. खाद्य पदार्थों को बनाते समय तथा पैकिंग करते समय स्वच्छ, रोगाणु रहित तथा कीटाणु रहित स्टील के उपकरणों का उपयोग करना चाहिए।
9. पदार्थों का ठण्डा करने व पुनः अधिक ठण्डा एवं गर्म करने के स्थानों पर थर्मामीटर लगे होने चाहिए।
10. आराम कक्ष में फ्लश टॉयलेट तथा गन्दगी रोकने के उपकरण लगे हो, वाटर प्रूफ सेप्टिक टैंक होना चाहिए।
11. रैस्ट रूम में हाथ धोने व पौंछने के लिए वाशिंग स्टेण्ड हो।
12. मैटल डिटेक्टर का प्रयोग किया जाय।
13. भोजन सम्बंधी भण्डार कक्ष, उत्पादन कक्ष तथा पैकिंग कक्ष स्वच्छता पूर्ण तरीके से प्रबन्धित किए जाने चाहिए।

ठोस कचरा प्रबन्धन

आधुनिक काल में तेजी से बढ़ते शहरीकरण, औद्योगिकीकरण तथा वातावरण प्रदूषण के प्रति लापरवाही ने

शहरों में ठोस कचरा की समस्या पैदा कर दी। जिसके कारण शहरों में गन्दगी जनित बीमारियाँ फैलने लगी। इस समस्या के निवारण के लिए शहरी निकायों में ठोस कचरा प्रबन्धन या कचरा निस्तारण कार्यक्रम शुरू किया। लन्दन में जनस्वास्थ्य एवं सफाई नियंत्रण कानून 1857 ई. में बनाया गया था। इस कानून में सभी शहरी परिवारों के लिए अनिवार्य किया गया था कि वे अपने घरों का कचरा बन्द कूड़े–दानों में रखें।

ठोस कचरा प्रबन्धन कार्यक्रम अभी शहरों तक सीमित है। शहरी क्षेत्रों में नगर निकायों द्वारा बुनियादी एवं आवश्यक सेवाओं में ठोस कचरा प्रबन्ध कार्य शामिल कर दिया गया है। ठोस कचरे से आशय है, कि घरों, कारखानों, उद्योगों, अस्पतालों एवं अन्य संस्थानों से निकलने वाला सूखा व गीला अनुपयोगी सामान (कूड़ा)। इसमें सब्जी व फलों के छिलके, अण्डों के खोल, बचा हुआ खाना, कागज, पैकिंग सामग्री, डिब्बे, आर्गनिक व अन आर्गनिक पदार्थ, बैटरी, सेल बल्ब, टूटे थर्मा मीटर, विषैले पदार्थ, रेडियोएक्टिव पदार्थ तथा विस्फोटक सामग्री आदि आते हैं।

ठोस कचरा प्रबन्धन से आशय है कि वातावरण एवं जन स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना ठोस कचरा का उपचार, निस्तारण, पुनः प्रयोग, पुनः चक्रण तथा ऊर्जा में परिवर्तन करने की प्रक्रियाओं का संचालन का प्रबन्धन करना। ठोस कचरा प्रबन्धन पर केन्द्र सरकार ने ठोस कचरा प्रबन्धन नियम बनाए हैं। नए नियमों में राज्य को दायित्व दिया गया है, कि शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों के स्थानीय निकायों को ठोस कचरे के प्रबन्धन का प्रशिक्षण, सुझाव एव संसाधन उपलब्ध कराएं और ठोस कचरा प्रबन्धन पर नए–नए शोध कार्य, विकास कार्य, तथा उपयोग की सुविधाएं भी उपलब्ध कराएं। शहरों में जनसंख्या बढ़ने से कचरा उत्पादन में भी वृद्धि हुई है। एक अनुमान के अनुसार एक लाख से पांच लाख की आबादी वाले शहरों में 210 ग्राम कचरा प्रतिदिन प्रति व्यक्ति उत्पादन होता है। पाँच लाख से अधिक आबादी वाले शहरों में प्रतिदिन 500 ग्राम कूड़ा प्रति व्यक्ति दर से उत्पादन होता है।

ठोस कचरा प्रबन्धन प्रक्रिया :–

जनता द्वारा निर्वाचित शहरी निकायों के जन प्रतिनिधियों और अधिकारियों ने ठोस कचरा प्रबन्धन का कार्य निकायों में नियुक्त मुख्य सफाई निरीक्षकों को सौंप रखा है। नियमित एवं ठेका पद्धति पर नियुक्त सफाई कर्मचारी कूडे को घरों, अस्पतालों तथा अन्य प्रतिष्ठानों से लाकर कूडा संग्रहण केन्द्र पर एकत्रित करते हैं। कूड़ा संग्रहण केन्द्रों से परिवहन के विभिन्न साधनों जैसे बन्द ट्रकों, खुले ट्रकों, ट्रैक्टर ट्रालियों तथा घोड़ा गाडियों द्वारा ठोस कचरा निस्तारण केन्द्रों पर ले जाया जाता है। कचरा निस्तारण केन्द्र पर, कचरा उत्पादन स्थलों के अनुसार अलग–अलग श्रेणियों में विभाजित कर रखा जाता है। जैसे घरेलू कचरा, अस्पतालों का कचरा, औद्योगिक कचरा विनिर्माण सामग्री का कचरा तथा व्यापारिक प्रतिष्ठानों का कचरा आदि। इस कचरे में निहित अवयवों के अनुसार अलग–अलग किया जाता है। जैसे जैविक कचरा पदार्थ, अजैविक कचरा पदार्थ, प्लास्टिक शीशी, धातुएँ, कागज, बैटरी, खतरा संभाव्य पदार्थ– विषैले पदार्थ, ज्वलनशील पदार्थ, विस्फोटक पदार्थ, रेडियो धार्मिक पदार्थ, संक्रमण रोग फैलाने वाले पदार्थ आदि।

ठोस कचरा निस्तारण के उपाय :–

ठोस कचरा प्रबन्धन की योजना में नगर निकायों द्वारा विभिन्न उपाय किए जाते हैं। उनमें से कुछ प्रमुख उपाय निम्नलिखित हैं :–

1. कचरा न्यूनीकरण एवं पुनः प्रयोग (Waste reduction and reuse) :–

उत्पादों का न्यूनीकरण व पुनः प्रयोग दोनों ही कचरा निवारण के उपाय हैं। न्यूनीकरण में उत्पादकों तथा उपभोक्ताओं दोनों को कचरा कम उत्पादित करने को बताया जाता है। जैसे पैकिंग कमकरना, कपड़े या पुनः प्रयोग वाले पदार्थों से बने थैले, पाउच तथा कवर आदि का प्रयोग करना। पुनः प्रयोग विधि में जनता को पुनः उपयोगी सामान क्रय करने को प्रोत्साहित किया जाता है। जैसे कपड़े नैपकिन, प्लास्टिक का सामान, कांच के बने बर्तन आदि आवांछित सामान को फेंकने के बजाय गाड़ देने, बांटने तथा दान देने की प्रेरणा दी जाती है।

2. कचरे का पुनः चक्रण (Recycling of Waste) :–

कचरे को उपयोगी कच्चे माल के रूप में उपयोग करना और कचरे की मात्रा कम करना। पुनः चक्रण कहा जाता है। पुनः चक्रण प्रक्रिया के तीन स्तर होते हैं। (1) संग्रहीत कचरे में से पुनः चक्रणीय पदार्थों व धातुओं को छांटकर अलग एकत्रित करना (2) एकत्रित पदार्थों या धातुओं से कच्चा माल तैयार करना (3) कच्चे माल से नए उत्पाद बनाना।

3. कचरा संग्रहण (Waste Collection) :–

शहरों में स्थानीय निकायों के द्वारा नियुक्त कर्मचारियें द्वारा विशेष गन्दगी वाले कचरे तथा पुनः चक्रीय कचरे को हफ्ते में दो बार संग्रह करवाना चाहिए। ऐसे कचरे जो मक्खियों के प्रजनन व आश्रय स्थल हो या बदबू फैलाने वाले, खुले में फैले कचरे को शीघ्रता से उठवाया जाये।

4. उपचार एवं निस्तारण (Treatment and Disposal) :–

कचरा उपचार तकनीकी यह खोज करती है कि प्रबन्धन फोर्म बदलकर कचरे की मात्रा कम की जाय, जिससे कचरा निस्तारण सरल बन जाये। कचरा निस्तारण की विधियाँ कचरे की मात्रा, प्रकार और रचना के आधार पर प्रयोग में लाई जाती है। जैसे उच्च तापमान पर, जमीन में दबाना तथा जैविक प्रक्रिया अपनाकर कचरे का निस्तारण कराना। उपचार और निस्तारण में से एक विकल्प चुना जाता है। कचरा का अन्तिम रूप देने के लिए प्रबन्धक

तकनीकी कम करना, पुनः चक्रण करना, पुनः उपयोग कर दवाना में से एक तकनीकी काम में ली जाती है।

5. भष्मीकरण (Incineration) :–

भष्मीकरण मुख्य सामान्य थर्मल प्रक्रिया है। कचरे का दहन आक्सीजन की उपस्थिति में किया जाता है। भष्मीरकण के बाद कचरा कार्बन डाइऑक्साइड, पानी की भाप तथा राख में बदल जाता है। यह तरीका ऊर्जा की रिकवरी का साधन है। इसका उपयोग बिजली बनाने के लिए ऊष्मा देने के लिए किया जाता है। भष्मीकरण ऊष्मा देने का अतिरिक्त साधन है। इससे परिवहन की लागत कम की जाती है। ग्रीन हाउस गैस "मीथेन" का उत्पादन कम किया जाता है।

6. गैसीकरण और पाइरोलिसिस (Gasification and Pyrolysis) :–

गैसीकरण और पाइरोलिसिस दोनों समान थर्मल प्रक्रिया हैं। इन प्रक्रियाओं में कचरे के अवयवों को उच्च ताप पर विखण्डित किया जाता है गैसीकरण में कचरे का दहन कम आक्सीजन के क्षेत्रों में किया जाता है और पाइरोलिसिस में कचरे का दहन ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में किया जाता है। ये तकनीकी कम ऑक्सीजन या बिना ऑक्सीजन वाले क्षेत्रों में प्रयोग की जाती है। दहनीय और बिना दहनीय गैसों के मिश्रण से पाइरोलिसिस द्रव्य पैदा किया जाता है। पाइरोलिसिस की विशेषता है कि वायु प्रदूषण किए बिना ऊर्जा का पुनः भरण किया जाता है।

ठोस कचरा प्रबन्धन के लाभ :–

ठोस कचरा प्रबन्धन प्रक्रिया से जनस्वास्थ्य, पर्यावरण तथा परिस्थिति की तंत्र को लाभ होता है। इस प्रक्रिया में जन सहभागिता का बहुत महत्व है। वर्तमान में इतनी तकनीकी दक्षता तथा आर्थिक क्षमता उपलब्ध है कि इस समस्या का काफी हद तक निराकरण किया जाता सकता है जिसके दूरगामी परिणाम होंगे जैसे –

1. अग्नि दुर्घटना, चूहे फैलना, संक्रामक रोगों के कीटों व रोगाणुओं को फैलने पर नियंत्रण तथा आवारा जानवरों पर नियंत्रण किया जा सकता है।
2. रोग नियंत्रित होंगे, जन स्वास्थ्य में सुधार होगा, श्रम करने क्षमता बढ़ेगी, अस्पतालों पर मरीजों का भार कम होगा।
3. जहरीले पदार्थों की निकासी कम होने से जल प्रदूषण नहीं हो सकेगा।
4. सस्ता और अच्छा वानस्पतिक खाद मिलेगा, कृषि की उत्पादन क्षमता बढ़ेगी तथा पैदावार अधिक होगी।
5. बिजली उत्पादन के लिए सस्ती ऊर्जा प्राप्त होगी, जिससे बिजली उत्पादन व्यय कम होगा।
6. कच्चा माल मिलेगा जिससे पुनः चक्रणीय पदार्थों से बनी वस्तुएँ सस्ती मिलेंगी।
7. कार्यों में वृद्धि होने पर रोजगार के अवसर अधिक उपलब्ध होंगे। आय में वृद्धि होगी।
8. कीमती धातुओं की उपलब्धि होती है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. स्वच्छ रहना मानव जीवन मूल्य है।
2. सभी प्रकार की गन्दगी को दूर कर, निरोग व आरामदायक जीवन जीना स्वच्छता है।
3. स्वच्छता में मानव के मल–मूत्र व कचरे का सुरक्षित निस्तारण शामिल है।
4. कचरे से जल, वायु एवं मानव स्वास्थ्य दुष्प्रभावित होते हैं।
5. भारत सरकार ने ग्रामीण स्वच्छता तथा शहरी स्वच्छता अभियान कार्यक्रम शुरू किये हैं।
6. ठोस कचरा शहरों में बहुत बड़ी समस्या है।
7. जन स्वास्थ्य तथा पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना कूड़े का निस्तारण ठोस कचरा प्रबन्धन कहा जाता है।
8. कचरा प्रबन्धन कार्यक्रम तीन (R) सिद्वान्त (Reduce, Reuse, Recycle) पर काम करता है।
9. कचरा प्रबन्धन से कच्चा माल व ऊर्जा साधनों की पुनः प्राप्ति होती है।
10. कृषि के लिए अच्छा खाद प्राप्त होता है।

अभ्यास प्रश्न

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. मानव के लिए स्वच्छता की क्यों आवश्यकता है?
2. स्वच्छ रहने की शिक्षा कब शुरू की जाती थी?
3. घनी आबादी क्षेत्र किस समस्या से अधिक पीड़ित है?
4. गन्दगी को हमारे तक पहुँचाने वाला कीट कौनसा है?
5. ठोस कचरा प्रबन्धन कहाँ तक सीमित है?
6. घरेलू कचरा क्या होता है?
7. खतरनाक कचरे कौन से हैं?
8. वनस्पतिक खाद्य किसे कहते हैं?

निबन्धात्मक प्रश्न :–

1. मानव जीवन में स्वच्छता का महत्व क्यों है?
2. विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार स्वच्छता का आशय स्पष्ट करिए।
3. स्वच्छता को कितने प्रकारों में बांटा गया है?
4. ठोस कचरा प्रबन्धन कार्यक्रम के उद्देश्य कौनसे हैं?
5. ठोस कचरा प्रबन्धन के लिए कौन से उपाय किए गए हैं?
6. ठोस कचरा प्रबन्धन से कौनसे लाभ होते हैं?